भोजन ही अमृत है

भोजन द्वारा ही सब रोगों को दूर करने के सरल उपाय

(संशोधित और परिवर्धित संस्करण)

लेखक

कविराज महेन्द्रनाथ पाण्डेय, 'आयुर्वेद-विशारद'

प्रकाशक

महेन्द्र रसायनशाला

कटरा, इलाहाबाद

१९४६

प्रकाशक
महेन्द्र रसायनशाला
कटरा, इलाहाबाद

प्रथम संस्करण १९३३
संशोधित संस्करण १९४६
मूल्य १॥)

मुद्रक—
ए० बी० वर्मा, शारदा प्रेस
प्रयाग

भूमिका

पथ्ये सति गदार्तस्य किमौषध निषेवणम्

रोगी मनुष्य यदि उचित आहार-विहार रखे तो बिना कोई औषधि सेवन किये हुए ही नीरोग हो सकता है। यदि उसका आहार विहार ठीक न हो तो सुधा-तुल्य औषध भी कुछ लाभ नहीं दिखा सकती। जिस प्रकार ऊपर लिखी बात सही है उसी प्रकार यह भी ध्रुव सत्य है कि उचित आहार विहार रखकर के ही स्वस्थ मनुष्य अपने स्वास्थ्य की रक्षा कर सकता है। यदि आहार विहार ठीक न रहे तो कुछ ही काल में वह अपने स्वास्थ्य से हाथ धो बैठेगा।

इस प्रकार भोजन का महत्त्व सहज ही समझ में आ जाता है। भोजन विषय के प्रत्येक अंग पर सस्कृत साहित्य में पूर्ण रूप से प्रकाश डाला गया है। अंग्रेजी साहित्य भी इससे भरा हुआ है। पर खेद है कि हिन्दी भाषा में इस विषय की अत्यन्त कमी है।

किस रोग में किस प्रकार का भोजन पथ्य है इस विषय को लेकर हिन्दी में शायद कोई पुस्तक नहीं लिखी गई। यदि लिखी गई है तो हमारे देखने में नहीं आई। इस कारण प्रस्तुत पुस्तक हिन्दी भाषा में बिलकुल नई चीज है। यह बात अवश्य है कि इस पुस्तक में बहुत थोड़े रोगों पर लिखा गया है किन्तु जितना लिखा गया है वह पर्याप्त है। यदि जनता में इस पुस्तक का आदर हुआ तो इसका दूसरा भाग भी लिखने का प्रयत्न किया जायगा।

इस पुस्तक में पाश्चात्य और पूर्वीय दोनों प्रकार की चिकित्सा-प्रणालियों से सहायता लेकर पथ्यापथ्य-निरूपण करने की चेष्टा की गई है। इससे आयुर्वेद के विद्यार्थियों को दोनों प्रकार के पथ्यापथ्य का तुलनात्मक अध्ययन करने में भी सहायता मिलने की आशा है।

इस पुस्तक के लिखने में चरक सुश्रुत, वाग् भट्ट, भाव प्रकाश, भैषज्य रत्नावली, योग रत्नाकर प्रभृति कई ग्रन्थों से सहायता ली गई है। इसके अतिरिक्त डाक्टर सेसिल वेब जानसन (Dr. Cecil Webb Johnson) की पुस्तक डायट एण्ड डिज़ीज़ (Diet and disease) से भी यथेष्ट सहायता ली गई है। यह लेखक इन सभी लेखकों का कृतज्ञ है।

२३-६-३३ महेन्द्रनाथ पाण्डेय

दूसरे संस्करण की भूमिका

इस पुस्तक का प्रथम संस्करण सन १६३३ में आदर्श ग्रंथ माला से प्रकाशित हुआ था। उस समय इस पुस्तक की खपत बड़ी जल्दी हुई थी। थोड़े ही दिनों में इसका प्रथम संस्करण समाप्त हो गया था। परन्तु कई कारणों से इसका दूसरा संस्करण जल्दी ही न प्रकाशित हो सका। सन ४२-४५ तक कागज का काल था इस कारण दूसरा संस्करण निकाल सकना सम्भव न था।

दूसरे संस्करण में ९ अध्याय बढ़ा दिये गये हैं और आदि से अन्त तक पुस्तक में संशोधन कर दिया गया है इस प्रकार यह पुस्तक बिलकुल नई सी हो गई है। आशा है अब यह जनता के लिए अधिक लाभ-दायक सिद्ध होगी। इस संस्करण में प्राकृतिक चिकित्सा के सिद्धान्त को भी संक्षेप में जोड़ देने का प्रयत्न किया गया है। इस प्रकार यह पुस्तक "हमारा भोजन" नामक हमारी पुस्तक की पूरक (Suppliment) हो गई है। आशा है कि इसे जनता अपनायेगी। हम आशा करते हैं कि शीघ्र ही इसका दूसरा भाग भी प्रकाशित करने में हम सफल हो सकेंगे।

२७-२-४६ — महेन्द्रनाथ पाण्डेय

विषय-सूची

भोजन ही अमृत है

१—भोजन का महत्त्व

यह बात निर्विवाद सिद्ध है कि हमारा स्वास्थ्य हमारे भोजन पर निर्भर है। यदि भोजन में शरीर को पोषण करने वाले सभी तत्व उचित परिमाण में मौजूर न हों तो वह भोजन चाहे जैसा भी क़ीमती हो हमारा कल्याण नहीं कर सकता। यदि भोजन सादा ही हो, अधिक छौंक-बघार न की गई हो किन्तु उसमें सभी तत्व उचित परिमाण में मौजूद हों तो वह विशेष उपयोगी होगा। हमारे शरीर के अन्दर रोग मुख द्वारा ही जाते हैं। अर्थात् जब हम खाने की ग़लतियाँ करते हैं तभी रोग उत्पन्न हो सकते हैं। एक जापानी कहावत भी है कि मुँह ही सब रोगों का द्वार है। इस कहावत की सत्यता की जाँच हम प्रतिक्षण कर सकते हैं। इससे यह सिद्धान्त निकलता है कि वह मनुष्य जो होशियारी से भोजन-सामग्री चुनता और खाता है अधिक स्वस्थ रहने का अवसर पा सकता है। और जो भोजन करने में ग़लतियाँ करते हैं और उचित सामग्री का उपयोग नहीं करते उनको अस्वस्थ होने की उतनी ही अधिक आशंका रहती है। इस कारण भोजन सदैव ऐसा होना चाहिए जो स्वास्थ्य के अनुकूल हो।

संसार में प्रत्येक मनुष्य का स्वभाव और स्वास्थ्य एक प्रकार का नहीं होता, उसके शरीर की बनावट में भी अन्तर होता है। इस कारण एक ही प्रकार का भोजन प्रत्येक व्यक्ति के लिए हित-कर नहीं हो सकता। अंगरेज़ी में एक कहावत है—One man's

food is poison to another अर्थात् एक मनुष्य का स्वाभाविक आहार दूसरे के लिए विषवत् हानिकर हो सकता है। अतः भोजन करने में कभी भी एक दूसरे की नक़ल करने की आवश्यकता नहीं। जो चीज अपने शरीर के लिए उपयुक्त है वही पथ्य है। शेष सभी पदार्थ त्याज्य हैं।

बहुत से लोगों का ख्याल होता है कि अधिक घी मलाई और गोश्त खाने से स्वास्थ्य ठीक रहता है और वे इन चीजों का खूब उपयोग करते हैं, किन्तु ये चीजें अधिक खाई जाने पर हानिकर होती हैं और शरीर में अनावश्यक चरबी की वृद्धि होती है, दूसरे पाचक यन्त्र को इन व्यर्थ की चीजों के पचाने में विशेष परिश्रम पड़ता है, वे कमज़ोर हो जाते हैं। इसी प्रकार कुछ लोग बिलकुल सादा भोजन करते हैं। उनके भोजन में घी दूध आदि की गन्ध भी नहीं आती। ऐसा भोजन शरीर का उचित रूप से पोषण नहीं कर सकता और मनुष्य दुर्बल और कमज़ोर हो जाता है।

भोजन का विभाग शारीरिक और मानसिक कार्य का विचार करके भी होना चाहिए। जिस तत्व की एक फौजी सिपाही या दिन भर परिश्रम करनेवाले मल्लाह को अधिक आवश्यकता है उसी तत्व की उतनी अधिक आवश्यकता मानसिक परिश्रम करने वाले वकील या दफ़्तर के बाबू आदि को नहीं पड़ती। मल्लाह या फौजी आदमी दिन भर खुली वायु में कठिन परिश्रम करते हैं। उन्हें खाने की अधिक आवश्यकता पड़ती है, किन्तु दूकान की गद्दी पर बैठने वाले सेठ जी को बिलकुल परिश्रम नहीं पड़ता। इस कारण उनको उतनी भूख नहीं लगती जितनी उपर्युक्त व्यक्तियों को लगती है, इस कारण भोजन के परिमाण के विषय में कोई खास नियम नहीं बनाया जा सकता।

हमारे आयुर्वेद के ग्रन्थों में भोजन-परिमाण विषयक कोई

खास विवरण नहीं देखने में आता जिसमें भोजन का परिमाण या उचित सम्मिश्रण का वर्णन हो। इसका खास कारण यही है जो ऊपर बताया गया है। प्रत्येक मनुष्य को थोड़ा बहुत व्यायाम करके अपनी जठराग्नि ठीक रखनी चाहिए। जठराग्नि ठीक रखने से भूख लगती है, समय पर भोजन पचता है और उसका उत्तम रस बनता है, जिससे शरीर का उचित रूप से पोषण होता है। जब भूख नहीं लगती, तब और कोई उपाय ऐसा नहीं रह जाता जिससे शरीर की आवश्यकताएँ पूरी हो सकें।

हम प्रति दिन देखते हैं कि चार-पाँच वर्ष के बच्चे प्रायः दिन भर खाया करते हैं। वे दिन भर खेलते हैं। खेलने से उनकी अग्नि ठीक रहती है, और भोजन ख़ूब पचता है, दूसरे उनका शरीर वर्द्धन की ओर अग्रसर रहता है। शरीर-वर्द्धन के लिए भोजन आवश्यक है। इस कारण प्रकृति की ओर से भी ऐसी ही व्यवस्था रहती है कि उनको अधिक भूख लगे। बच्चों को भोजन की सब से अधिक आवश्यकता रहती है। उसी प्रकार तरुण होने वाले बालक बालिकाओं को, जिनकी अवस्था १५-१६ वर्ष की होती है, उतने ही भोजन की आवश्यकता होती है जितने की पूर्ण तरुण पुरुष को होती है। वृद्धावस्था में इन्द्रियाँ शिथिल रहती हैं, भूख कम लगती है, शरीर का वर्द्धन रुक जाता है। इस कारण उनको भोजन की उतनी अधिक आवश्यकता नहीं रहती। इन सब बातों का ध्यान रखना आवश्यक है। ऐसी ग़लती कभी नहीं होनी चाहिए कि वर्द्धन की ओर अग्रसर रहने वाले बच्चों को या तरुणों को उचित परिमाण में पोषण न मिले।

हमारे देश में ऐसे नौजवान युवक और युवतियाँ कम दिखलाई पड़ती हैं जो वस्तुतः नौजवान कहलाने के अधिकारी हों। इसके बहुत से कारण हो सकते हैं और हैं, किन्तु सब से बड़ा कारण यहाँ की दरिद्रता है। उस पिशाचिनी के मारे भोजन

मिलना कठिन हो गया है। फिर उचित और अनुचित भोजन का विचार ही कहाँ आता है। यदि हमारे यहाँ से दरिद्रता दूर हो जाय, सब को उचित परिमाण में भोजन मिलने लगे, सब लोगों को उचित व्यायाम और खेलने की सुविधा प्राप्त हो जाय। दफ़्तरों और कारखानों में काम करने वाले लोगों के काम के घण्टे घटा दिये जायँ ताकि वे नियमपूर्वक रह सकें तो हमारे नवयुवक और युवतियाँ भी तगड़ी दिखाई पड़ने लगें। हमारे देश में रोटी इतनी महँगी हो गई है कि उसके प्राप्त करने के लिए हमारी सारी शक्ति क्षीण हो जाती है। जिन दफ़्तरों और मालिकों की अधीनता में हमें काम करना पड़ता है वे हमारे खून के प्यासे होते हैं। वे १०-१० रुपये देकर हमारे रक्त को चूस लेते हैं, थोड़ा खाना देकर इतना अधिक काम लेते हैं कि हमारा शरीर पुष्पित और पल्लवित नहीं होने पाता। जब तक ये बुराइयाँ देश से नहीं दूर होतीं यहाँ का स्वास्थ्य ठीक होने में सन्देह है। हम यह नहीं चाहते कि मालिक नौकरों को बैठा कर खाना दें। नहीं वे उनसे मनुष्य की भाँति काम लें, पशु की तरह नहीं, उन्हें खाना भर पेट दें, इतनी तनखाह दें जितने की उनको आवश्यकता है, फिर काम करने के घण्टे निश्चित हों जिससे वे अपने उचित व्यायामादि भी कर सकें।

आप देख सकते हैं कि एक युवक ८ घण्टे दफ़्तर में पिसने के बाद जब अपने और अपने परिवार के लिए पर्याप्त भोजनोपार्जन नहीं कर पाता तब ट्यूशन करता है। ट्यूशन में भी उसके ३-४ घण्टे खर्च हो जाते हैं। इतने परिश्रम पर भी उचित भोजन नहीं मिलता, व्यायाम और खेलने के लिए समय नहीं मिलता। भला वह युवक अकाल मृत्यु का ग्रास क्यों न होगा! अस्तु।

हमारे शरीर में मांस, वसा, जल और कई प्रकार के लवण पाये जाते हैं। यही चीज़ें हमारे भोजन द्वारा शरीर के अन्दर

जानी चाहिए। तभी शरीर का वर्द्धन और पोषण ठीक तरह से हो सकता है। इसी कारण पश्चिमी डाक्टर कहते हैं कि प्रोटीन, वसा, श्वेतसारीय पदार्थ (Starch) जल और कई प्रकार के नमक और कुछ विटामिन्स युक्त भोजन प्रति दिन प्रत्येक मनुष्य को मिलना चाहिए। यदि कोई मनुष्य ऐसा भोजन करता हो जिसमें प्रोटीन और वसा का अभाव हो अथवा कार्बोज (Carbohydrate) की कमी हो तो उसका स्वास्थ्य ठीक नहीं रह सकता। मस्तिष्क से काम लेने वाले लोगों को वसा और प्रोटीन की अधिक आवश्यकता पड़ती है, और शारीरिक परिश्रम करने वाले को कार्बोज की। इस बात का अवश्य ध्यान रखना चाहिए। यदि इसके विरुद्ध भोजन दिया जायगा तो लाभ के बदले हानि होगी। भोजन के विषय में "हमारा भोजन" नामक हमारी पुस्तक प्रकाशित हो गई है। इस विषय के विस्तृत वर्णन के लिए उसे देखिए।

डाक्टर सेसिल वेब जानसन (Cecil Webb Johnson) ने कहा है—

विचारशील व्यक्ति के लिए उचित रूप से 'मिश्रित' भोजन ही एक मात्र भोजन है जिसमें सभी खाद्यसामग्री उचित मात्रा में रहती है।

पूर्वीय विद्वानों ने संसार को पंचभौतिक माना है। हमारा शरीर भी उन्हीं पाँच तत्वों से बना है। इन्हीं तत्वों के मिश्रण से ६ रसों की उत्पत्ति हुई है। वे रस ये हैं—मधुर, अम्ल, लवण कटु, तिक्त और कषाय। इन्हीं पाँच तत्वों से वात, पित्त, कफ की उत्पत्ति होती है। इस शरीर को स्वस्थ रखने के लिए वात, पित्त, कफ और रस रक्त आदि को उचित परिमाण में रखना चाहिए। ये दोष और धातु तभी उचित परिमाण में रहेंगे जब सभी रस हमारे शरीर में उचित परिमाण में पहुँचेंगे। अतः हमारा भोजन

ऐसा होना चाहिए जिसमें सब रस उचित परिमाण में विद्यमान हों। सुश्रुत ने लिखा है—

पंचभूतात्मक (पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश इन पाँच तत्वों के गुण वाले) चतुर्विध (भक्ष्य, भोज्य, लेह्य, पेय) षट् रस (मधुर, अम्ल, लवण, कटु, तिक्त और कषाय रसवाले), द्विविध वीर्य (शीत और उष्ण वीर्य वाले) तथा अष्ट विध वीर्य वाले (रस आदि आठों प्रकार के वीर्य वाले) तथा अनेक गुणवाले भोजन करना चाहिए। इसी प्रकार के भोजन से शरीर स्वस्थ रह सकता है। अतः भोजन का चुनाव करते समय विवेक से काम लेने की आवश्यकता है। जब तक विवेक के साथ भोजन का चुनाव न किया जायगा स्वास्थ्य ठीक नहीं रह सकता। यदि भोजन उचित परिमाण में उचित रीति से किया जाय तो निस्सन्देह यह अमृत है और यदि विवेक शून्य भोजन किया जाय तो वही विषवत घातक है।

२—भोजन ही अमृत है

इस समय के सभ्य समाज में शायद ही कोई ऐसा मिलेगा जो अपने शरीर में व्याधि उत्पन्न करने का स्वयं कारण न बनता हो। हाँ, यह बात अवश्य है कि किसी में यह दोष कम होता है, किसी में ज्यादा। किन्तु उतने ही से सबेरे शाम सिर भारी रहना, शरीर में सुस्ती आना, जुकाम होना, पाचन शक्ति का दुर्बल होना साधारण बात है। इसी प्रकार के अनेक छोटे-मोटे रोग जब-तब घेरे ही रहते हैं। इन सब व्याधियों का एक मात्र कारण भोजन का दुष्प्रयोग है। इनसे बचाव का उपाय भी भोजन का उचित रीति से काम में लाना ही है। बहुधा खाद्य पदार्थ जो हम भोजन करते हैं अनावश्यक होते हैं और शरीर-पोषण में पूर्णतया सहायता नहीं पहुँचा सकते। हम जब अनियमित भोजन करने का स्वभाव नहीं छोड़ते तो रोग-ग्रस्त हो जाते हैं। हम अपना नित्य का आहार कितनी असावधानी से करते हैं! उत्तम आहार से ही स्वास्थ्य में सुधार होता है और आनन्द की प्राप्ति होती है।

यह बड़े दु:ख की बात है कि अभी तक सभ्य कहाने वाले मनुष्यों ने अपने आहारादि के नियम बनाने में अपना ध्यान यथावत नहीं दिया है। इसीलिए लोग दुख भोग रहे हैं। लोगों ने पशुपालन में कितनी दक्षता प्राप्त कर ली है। परन्तु वे ही अपने स्वास्थ्य से लापरवाह हैं। पशुओं की ओर इसलिए अधिक ध्यान लोग देते हैं कि उनसे उनको लाभ होता है परन्तु जो कुछ पशुओं के स्वास्थ्यवर्द्धन से द्रव्य प्राप्त होता है वह रोग की

औषधि के लिए साधारण व्यक्ति के घर से वैद्यों के भंडार में चला जाता है। इसे लोग कम सोचते हैं!

हमारा शरीर अनेक मौलिकों से बना है और हम जब परिश्रम करते हैं तो इनमें से कुछ का ह्रास हो जाता है। और परिश्रम न करने पर भी उनका ह्रास होता है इन्हीं की पूर्ति के लिए भोजन की आवश्यकता होती है। यह ह्रास भी भिन्न-भिन्न प्रकार के परिश्रम से भिन्न-भिन्न प्रकार का होता है। इसीलिए सब लोगों को एक तरह के भोजन की आवश्यकता नहीं, बल्कि भिन्न भिन्न व्यवसाय वालों को भिन्न-भिन्न भोजनों की आवश्यकता होती है। जैसे एक मल्लाह को अपने शरीर के परिश्रम के लिए कार्बन और कैलशियम की अधिक आवश्यकता होगी परन्तु एक लेखक को अपने मानसिक परिश्रम के लिए फासफोरस की अधिक आवश्यकता होगी। थाल सुसज्जित करने के लिए, भोजन को सुस्वादु बनाते-बनाते उसमें बहुत से ऐसे पदार्थ मिला दिये जाते हैं जिनकी मनुष्य के शरीर-पोषण के लिए बिलकुल ही आवश्यकता नहीं होती। ऐसे भोजनों में प्रायः स्टार्च और चीनी की ही अधिकता रहती है। किसी-किसी में तरह-तरह के मिर्च मसाले मिले रहते हैं। इन चीजों का अधिक उपयोग स्वास्थ्य को खराब करनेवाला होता है।

हम लोग सभ्यता तथा कला-कौशल को एक उच्च स्थल पर पहुँचा चुके हैं अतएव सभी सामान भी सुसज्जित रखने लगे हैं। उसी के फल स्वरूप भोजन में बनावट की इतनी अधिक मात्रा हो रही है कि देख कर आश्चर्य होता है। नित्य के परिश्रम के कारण जिन मौलिकों की क्षति होती है उसकी पूर्ति के लिए किसी प्रकार की औषधि काम नहीं दे सकती। उसके लिए भोजन का उचित मात्रा में ठीक-ठीक प्रयोग ही आवश्यक है। लोग हानिकारी पदार्थों, भाँति भाँति की मिठाइयाँ तथा अनेक व्यंजनों को

दिन में तीन चार बार ठूस-ठूस कर खाते हैं और यह कभी नहीं सोचते कि उन्हें भोजन की यथार्थ में आवश्यकता है भी या नहीं। उनके विचार से ठूस-ठूस कर खाते रहना ही स्वस्थ रहने के लिए बहुत अच्छा उपाय है। ऐसे लोग हमेशा यह शिकायत करते हैं कि वे खाते तो इतने बढ़िया-बढ़िया पदार्थ हैं किन्तु सदा बीमार रहते हैं उनके सिर में, पैर में और शरीर के अन्य अंगों में दर्द हुआ ही करता है। वे लोग घड़ी देख कर ठीक समय पर भोजन करेंगे किन्तु यह ख्याल नहीं करेंगे कि उन्हें भूख भी है या नहीं। और भूख न रहने पर भी घड़ी के काँटे को देख कर आमाशय में दुबारा भोजन ठूस लेंगे। इस प्रकार के भोजन से तो लाभ के बदले हानि ही अधिक होती है।

हमारे शरीर को सर्वदा कुछ समय पर विश्राम की आवश्यकता होती है उसी तरह पेट को भी विश्राम की जरूरत रहती है परन्तु इस ओर लोग कम ध्यान देते हैं और पेट को हमेशा भरते ही रहते हैं। जब काम करते-करते पेट थक जाता है तब पित्त रोग या वमन के बहाने वह बल पूर्वक विश्राम कर लेता है। यहाँ पर एक कहानी याद आ रही है।

एक धन-सम्पन्न व्यक्ति था जो ठूस ठूस कर भोजन करके अपने को रोगी बना चुका था। इलाज करते समय वह अपना भोजन बन्द नहीं करना चाहता था और खा भी नहीं सकता था। अन्त में उसने सोचा कि किसी प्रकार से स्वास्थ्य लाभ करना चाहिए। उसने सारा भू-मंडल छान डाला। उसने बड़े-बड़े भोजनालय वा अन्य सुसज्जित भोजन-भवनों की खाक छानी पर कुछ लाभ नहीं प्रतीत हुआ। उसके देखने से मालूम होता था कि उसे बहुत बढ़िया और उत्तम भोजन प्राप्त है परन्तु जिस फल की वह इच्छा करता था वह उसे प्राप्त नहीं है।

वह बड़े बड़े उद्भट चिकित्सकों का परामर्श लेते-लेते थक

गया पर लाभ न हुआ। संयोग से उसे प्रकृति का आश्रय लेना पड़ा। एक बार जब वह जहाज में भ्रमण कर रहा था एक बड़ा भयंकर तूफान आ जाने के कारण उसका जहाज समुद्र में डूब गया। संयोग से वह तैरता-तैरता एक मूँगे के टापू से जा लगा। उसे वहाँ पर भूखों मरने की आशंका हुई। वहाँ पर अकेले रहने के कारण उसे जंगली फलों पर अपना जीवन निर्वाह करना पड़ा। इस भोजन से उसने अपने स्वास्थ्य में अद्भुत परिवर्तन देखा। इसे बड़ा आश्चर्य हुआ। धनवान व्यक्ति के शरीर में जो विषाक्त अम्ल प्रवृष्ट हो गया था प्राकृतिक भोजन से उसका सर्वथा नाश हो गया और उसके स्थान पर उपयुक्त पदार्थ आ मिले जिससे शरीर पुष्ट हो गया। वह महाजन प्राकृतिक पदार्थों के खाने पर वाध्य हो कर अपने रक्त संस्थान का संशोधन कर बिल्कुल स्वस्थ हो गया जो कितनी ही सम्पत्ति व्यय कर किसी औषधि तथा सुस्वादु भोजन से कभी स्वप्न में भी सम्भव न था। कुछ समय बाद एक जहाज वहाँ पर आया और उसे अपने देश को ले गया। देश को लौटने पर भी उसने अपना साधारण फलाहार का स्वभाव न छोड़ा क्योंकि द्वीप में रहते हुए प्रकृति से उसने स्वास्थ्य का पाठ अच्छी तरह सीख लिया था और लाभ उठा चुका था। वह १०३ वर्ष तक जीवित रहा।

वही भोजन लाभदायक होता है जो अपनी प्राकृतिक अवस्था में रहता है। प्राकृति भोजन से हमें उचित मात्रा में विटामिन और खनिज लवण मिलते हैं। विटामिन और खनिज लवणों का प्रभाव हमारे शरीर पर बड़ा चमत्कारिक पड़ता है। ये दोनों चीजें हमारे शरीर की रोग-निवारक शक्ति बढ़ती हैं, हमारे शरीर को बल देती हैं, जोरदार रक्त पैदा करने में मदद देती हैं। दिल, दिमाग, पाचनशक्ति, गुर्दे और फेफड़ों को अपना ठीक-ठीक काम करने में मदद करती है।

भोजन कितना ही पूर्ण क्यों न हो, उसमें मिश्रित पदार्थ कितने ही वैज्ञानिक और उचित रूप में क्यों न मिलाये गये हों यदि उस भोजन में खनिज लवणों और विटामिनों का अभाव है तो वह स्वास्थ्य वर्द्धक नहीं होगा। जो लोग इस तरह का भोजन हमेशा करते हैं, जिनको ऐसा ही भोजन प्रिय है और ऐसा दूषित भोजन करने की जिनकी आदत हो गई है वे कभी स्वस्थ नहीं रह सकते। उनको दिमाग की कमजोरी, सिर दर्द बेचैनी, काम में जी न लगना, नींद न आना, दिल धड़कना आदि तरह तरह के रोग घेरे ही रहेंगे।

यह समझना बहुत भूल है कि हम जो कुछ भी खाते हैं और जिस तरह भी खाते हैं सब हमारे शरीर और स्वास्थ्य के अनुकूल होगा। हमारा गलत ढङ्ग से किया हुआ भोजन शरीर में विजातीय द्रव्य ही बढ़ाते हैं, और उसे शरीर से निकाल बाहर करने के लिए हमारी प्रणाली को कभी-कभी भारी प्रयत्न करने पड़ते हैं।

हम जो भोजन करते हैं यदि वह पच जाय, उसका रक्त बन जाय तब तो उससे लाभ होता है परन्तु यदि उस भोजन का शुद्ध रक्त बनकर शरीर में न मिल सके तो उसे बाहर करने में शरीर को व्यर्थ ही अपनी शक्ति क्षीण करनी पड़ती है। बार बार भोजन करने से वह पचता नहीं उसका रस कच्चा बनता है इसलिए अकसर ऐसे लोगों को अजीर्ण रोग हो जाता है।

शरीर को स्वस्थ रखने के लिए जोरदार खून बनना बहुत जरूरी है। हमारे रक्त में क्षार और अम्लता दोनों का मिश्रण रहता है। जिस रक्त में क्षार (alkalinity) की मात्रा अधिक रहती है वह रक्त जोरदार रहता है जिसमें अम्लता (acid) अधिक होती है वह कमजोर रहता है। शुद्ध रक्त में २० प्रतिशत अम्लता और ८० प्रतिशत क्षारता रहती है। इस अनुपात में अम्लता बढ़ने से रोग उत्पन्न हो जाता है।

मैदा, अण्डा, बासी मांस, उबाला हुआ दूध, चीनी, बनस्पति घी, बासी खाना, तरह तरह की मिठाइयाँ, मालपुवे आदि रक्त में अम्लता बढ़ाने वाले होते हैं।

फल वाली शाक-तरकारियाँ जैसे परवल, लौकी, नेनुआ, बैगन, भिण्डी, आदि; पालक, गोभी, पात गोभी, थोड़ी मात्रा में मूली, शलजम आदि तथा मौसमी फल रक्त में क्षारता बढ़ाते हैं, रक्त को शुद्ध करते हैं, शरीर से जहर निकालकर बाहर करके रोग दूर करने में इनका बहुत बड़ा हाथ है।[१] खनिज लवण और विटामिन तो हमें इन्हीं पदार्थों से मिलते हैं। परन्तु हमारे यहाँ लोग इनका ठीक ढङ्ग से उपयोग नहीं करते। इनका उचित और ठीक उपयोग करने से शरीर से सभी रोग दूर होते हैं।

[१] विशेष जानकारी के लिए देखिए हमारी दो पुस्तकें फलाहार चिकित्सा और स्वास्थ्य के लिए शाक तरकारियाँ।

३—भोजन कैसा होना चाहिए

यह कहने की आवश्यकता नहीं कि हमारी जिन्दगी भोजन पर ही निर्भर रहती है। जिस प्रकार जीवन रखने के लिए शुद्ध वायु और शुद्ध जल अत्यन्त आवश्यक है उसी प्रकार भोजन भी। हम संसार में जो कुछ देखते हैं, भोजन के लिए ही। हम स्वराज्य चाहते हैं। क्यों? इसका उत्तर भोजन ही दे सकता है। यदि संसार में भोजन की आवश्यकता न होती तो इन नाना प्रकार के जीवन-युद्धों का जन्म ही न होता। फिर यह नहीं कहा जा सकता कि सभ्यता शब्द का आविष्कार हो पाता या नहीं, जड़ चेतन की दशा कैसी होती यह बतलाना भी असम्भव है।

हम दुनिया में जहाँ दृष्टि दौड़ाते हैं प्रायः प्रत्येक स्थान पर हमको यही दृष्टि आता है कि भोजन सब स्थान पर आवश्यक है। एक जड़ वस्तु इञ्जिन को ही ले लीजिए, उसे भी कोयला पानी चाहिए। यदि लालटेन का तेल चुक जाय तो वह प्रकाश नहीं दे सकती। पशु-पक्षी, कीट-पतङ्ग, जड़-चेतन सब में ही भोजन के लिए भीषण संग्राम छिड़ा है। किन्तु मनुष्य और पशु-पक्षियों के भोजन में बहुत अन्तर है। पशुओं का भोजन वही रहता है जो प्रकृति द्वारा जो निश्चित किया जा चुका है, उसमें परिवर्तन नहीं हो सकता। फलाहारी बन्दर मांसाहारी नहीं हो सकता। वैसे ही मांसाहारी शेर घास खाकर जीवन नहीं धारण कर सकता। किन्तु मनुष्यों में कोई विशेष नियम नहीं दीखता। प्रकृति ने मनुष्य को बुद्धि देकर स्वतन्त्र कर दिया है। उचित तो यह था कि बुद्धि का सदुपयोग करके हम कृत्रिमता से दूर रहते और मनुष्योचित आहार द्वारा ही जीवन यापन करते। किन्तु यह

समस्या है बड़ी कठिन। जो लोग जङ्गलों में रहते हैं, जो मैदानों में रहते हैं, वे तो फल और अन्न से अपना निर्वाह कर सकते हैं किन्तु जो एक ऐसे द्वीप में रहते हैं जो चारों ओर से समुद्र से घिरा है और उसकी आबादी अधिक है, वे बेचारे इतना अन्न और फल कहाँ पा सकते हैं कि सब का उचित निर्वाह हो सकें। ऐसे स्थान के लोगों को अपनी सुविधानुसार पेशे अख्तियार करने पड़ते हैं। वे प्रायः समुद्र से मछली पकड़ने और उसके बेचने का काम करते हैं और इस प्रकार मांसाहार को प्रोत्साहन मिलता है। इसी प्रकार जङ्गल के पास रहने वाले लोग जङ्गली जीवों का शिकार करते हैं और उसी पर अपना जीवन निर्वाह करते हैं।

किन्तु मनुष्य की शरीर-रचना पर विचार करने से ज्ञात होता है कि वह शाकाहारी पशु है। उसने मांसाहार या तो जीभ के स्वाद के लिए अथवा जीविका न मिलने के कारण ग्रहण किया है। कुत्ता, बिल्ली और शेर चीते के मुख की बनावट से मनुष्य का मुख नहीं मिलता, न उनके दाँतों से मनुष्य के दाँतों की बनावट मिलती है, बल्कि बन्दर के दाँत और मुँह से ही मनुष्य के दाँत और मुख मिलते हैं। बन्दर शाकाहारी पशु है। इससे यह ज्ञात होता है कि मनुष्य को भी शाकाहार ही करना चाहिए। अब तो विकासवादी लोग यह सिद्ध करते हैं कि मनुष्य के पूर्वज बन्दर थे, फिर अपने पूर्वजों के गुण को छोड़ कर लोग क्यों मांसाहार करते हैं।

मांसाहार और शाकाहार एक विवाद-ग्रस्त प्रश्न है। बहुत दिनों से इस पर विवाद होता आ रहा है। अब पश्चिम के मांसाहारी लोग भी शाकाहार के पक्ष में अपने विचार प्रकट कर रहे हैं और अपने अपने देशों में इसके प्रचार के लिए सभाएँ खोल रहे हैं; और योरोप आदि देशों में शाकाहारी भोजन के होटल

खुल गये हैं जहाँ आसानी से अपनी रुचिका शाकाहारी भोजन मिल सकता है। यह प्रसन्नता का सम्वाद है।

प्राचीन काल से ही हमारे यहाँ ऋषि लोग शाकाहार करते आ रहे हैं, किन्तु साथ ही मांसाहार का भी प्रचार था, क्योंकि आयुर्वेद में मांस का विशद वर्णन आया है। यदि मांसाहार की ओर जनता की रुचि न होती तो सम्भवतः आयुर्वेद इससे अछूता बच जाता। हमारे यहाँ के धर्माचार्यों ने मांसाहार का विरोध किया है, किन्तु मनुस्मृति आदि ग्रन्थों में श्राद्ध के समय मांसपिंड आदि देने का विधान मिलता है। यह एक गोरखधंधा है। प्राचीन ग्रन्थों से विवाद के लिए दोनों प्रकार के प्रमाण दिये जा सकते हैं।

वैज्ञानिकों ने मांस का विविध ढङ्ग से अध्ययन किया। उन्होंने बताया कि मांस प्रोटीन है अर्थात् मांस बढ़ाने वाला है। मांस में पाया जानेवाला प्रोटीन उत्तम दरजे के प्रोटीन में समझा जाता है। वह मनुष्य के मांस के अधिक निकट है। इसी ख्याल से वैज्ञानिकों ने मांस की बहुत तारीफ़ की।

प्राचीन काल में हमारे देश के राजे महाराजे और बादशाह मांस खूब खाते थे। एक तो इसका मजा उनको पसन्द आता था दूसरे यह कामोत्तेजक भी है। इसमें कोई शक नहीं कि इससे शरीर पुष्ट भी होता है।

आज से दस वर्ष पहले तक मांसाहार को वैज्ञानिक लोग बहुत अच्छा समझते थे। आधुनिक खोजों से लोगों के विचार मांस के सम्बन्ध में बदल रहे हैं।

प्रोटीन या मांस बनानेवाला पदार्थ यदि आवश्यकता से अधिक खाया जाय तो वह अंश जो जरूरत से ज्यादा होता है हमारे शरीर में जमा नहीं होता बल्कि खून में मिल कर गरमी पैदा करता है और शरीर द्वारा बाहर कर दिया जाता है। उसे निका-

लने के लिए गुर्दों को अधिक काम करना पड़ता है। दूसरे शरीर में पड़ा रह कर प्रोटीन सड़ता है और विष पैदा करता है। इस विष पैदा होने के कारण ही योरोप के उन लोगों को कैन्सर नामक घाव अधिक होते हैं जो मांसाहारी हैं। जो मांसाहार नहीं करते उनको कैन्सर बहुत कम होता है, या नहीं होता।

मांस में सड़ने और जहर पैदा करने के दुर्गुण होने के कारण वह उतनी अच्छी चीज नहीं समझा जा रहा है जितना पहले लोग समझा करते थे। दूध की प्रोटीन में यह दुर्गुण नहीं है।

रोगों में पथ्य रूप से मांस देने के लिए आयुर्वेद में भी विधान है। वैद्य लोग इसका पथ्य देते भी हैं। ताजा मांस थोड़ा सा आवश्यकतानुसार यदि दिया जाय तो हर्ज नहीं है। परन्तु यह जरूरी नहीं है कि मांसाहार किया ही जाय। जिन रोगों में मांस का विधान है उन रोगों में भी जिनको मांस से परहेज है उन्हें मांस लेने की जरूरत नहीं है। रोगी आदमी को स्वास्थ्य प्रदान करने के लिए शाक तरकारियाँ, फल और दूध ही सर्वोत्तम पथ्य है।

इस पुस्तक में मांसाहार के लिए इसी कारण लिखा गया है कि जो लोग मांसाहारी हैं उनको कोई विशेष कष्ट न हो।

हमारे यहाँ के अहिंसाव्रती ऋषि मुनि जंगलों में रहते थे। वे फल फूल पर ही जीवन-निर्वाह करते थे और दीर्घजीवी होते थे। अतः हमको भी दीर्घ जीवन के लिए फलाहार ही पर जीवन बिताना चाहिए।

हमारे यहाँ के फलों, कन्दों, अन्नों और औषधियों में ऐसी शक्ति है कि हम किसी कृत्रिम पदार्थ से उसे पा नहीं सकते। आज भी ऐसी जड़ी बूटियाँ हमारे यहाँ मौजूद हैं जिनके नित्य के सेवन से मनुष्य २०० वर्ष तक दीर्घ जीवन प्राप्त कर सकता

है। हमारे पूर्वजों और हम में एक बड़ा अन्तर यह पड़ गया है कि वे प्रकृति के पुजारी थे और हम कृत्रिमता के। हमारे पतन का एक बड़ा कारण यह भी है। आज भी जो पशु-पक्षी प्राकृतिक भोजन करते हैं स्वस्थ और दीर्घजीवी होते हैं। वे मनुष्य की अपेक्षा कम बीमार होते हैं। प्राकृतिक रूप से हमारा अभिप्राय खाद्य पदार्थ का वास्तविक स्वरूप या उसमें कम से कम परिवर्तन से है। पक्षी फलों को उसी रूप में ग्रहण करते हैं जिस रूप में वह होता है, वे उसे पकाते नहीं, उसमें नमक-मिर्च भी नहीं मिलाते। इस कारण फलाहार का वास्तविक लाभ उन्हीं को प्राप्त होता है।

प्राचीन काल में जङ्गलों में रहनेवाले ऋषि-मुनि सूर्य के ताप से पके हुए ताज़े फल खाते थे। आज की तरह सड़े गले फल शायद लोग छूते भी न रहे होंगे। इस युग में भी फलाहार के अनुभवी ताजे और खूब पके ही फलों के खाने की अनुमति देते हैं। हमारे यहाँ का प्राचीन पाकशास्त्र जिस सिद्धान्त के आधार पर बना था उस प्रणाली के द्वारा बने खाद्य पदार्थ का स्वरूप यथासम्भव बहुत ही कम परिवर्तित होता था। किन्तु आजकल घी शक्कर और मसालों ने अपना प्रभाव जमा लिया है और उनके चक्कर में पड़कर हम अपना स्वास्थ्य नष्ट करते चले जा रहे हैं। भोजन के विषय में एक बात और ध्यान देने योग्य है। जहाँ तक सम्भव हो भोजन ताजा होना चाहिए। हमारे धर्म-शास्त्रों में एक पहर से अधिक देर का बना हुआ भोजन ग्रहण करने की आज्ञा नहीं है, किन्तु हम इतने पिछड़े हुए हैं कि इन बातों को भी नहीं समझते। भोजन जितना ही बासी होता है उतना ही अधिक विकारयुक्त होता है और शरीर में अनेक प्रकार के भीषण रोग उत्पन्न करता है। वह आमाशय में जाकर सड़ने लगता है। क्योंकि उसका सड़ने का काम, बासी होने के कारण

यहीं आरम्भ हो जाता है। फिर वह सड़ा हुआ भोजन शरीर में कितने विकार उत्पन्न कर सकता है यह बात कल्पनातीत है। पाश्चात्य सभ्यता में इस बात का ध्यान नहीं रखा जाता। पश्चिमी देशों में भोजन को बासी करके खाने की प्रवृत्ति सी हो गई है। वहाँ के भोजन महीनों और कभी-कभी बरसों तक रखे जाते हैं। यह अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि वे उन्हें डिब्बे आदि में ऐसे वैज्ञानिक ढंग से बन्द रखते हैं कि उसमें हवा तक का प्रवेश नहीं हो सकता। उनको सड़ने और खराब होने से बचाये रखने के लिए भी वे पूर्ण चेष्टा करते हैं; किन्तु प्रकृति मूढ़ नहीं, यह अपने नियम की अवहेलना करनेवाले को दण्ड दिये बिना नहीं रह सकती। डिब्बे-बन्द मछली और गोश्त अक्सर विषैले हो जाते हैं और उनको खानेवाले मर जाते हैं, ऐसी खबरें अखबारों में छपती ही रहती हैं। यह निस्संकोच भाव से स्वीकार किया जा सकता है कि हमारे यहाँ प्राचीन काल में आज की अपेक्षा रोगों की संख्या थोड़ी थी। आजकल के बेढंगे खाद्य पदार्थों के व्यवहार के कारण पाश्चात्य देशों में रोगों की संख्या भीषण रूप से बढ़ रही है और उनके संसर्ग से वे रोग हमारे यहां भी बढ़ते चले जा रहे हैं। इसलिए हम भारतवासी अपनी प्राचीन बातों पर जितना ही अधिक अमल करेंगे वह हमारे सुख और स्वास्थ्य के लिए उतना ही अच्छा होगा।

स्वभाव से ही हितकर पदार्थ

लाल शालि चावल, साठी चावल, जव, गेहूँ, मूँग, मसूर, अरहर, मीठे रस वाली चीजें, सेंधा नमक; ये उत्तम आहार द्रव्य हैं, प्राय: सब के लिए हितकर होते हैं।

फलों में अनार, आमला, मुनक्का, खजूर, छुहारा, फालसा,

खिरनी और बिजौरा नींबू ये सब स्वभाव से ही उत्तम होते हैं। इनके खाने से प्रायः कोई हानि नहीं होती।

पत्र शाक में बथुआ, जीवन्ती और पोई उत्तम होती हैं, फल शाकों में परवल, और जड़ वाले शाकों में सूरन अच्छा और लाभदायक होता है।

जङ्गली जीव के मांसों में एण, कुरङ्ग और हरिण के मांस उत्तम होते हैं। पक्षी के मांस में तीतर और लवा का मांस अच्छा होता है। मछलियों में रोहू मछली, जलों में आकाश का जल, दूधों में गाय का दूध, घृतों में गाय का घी, तेलों में तिल का तेल, और मीठों में मिश्री श्रेष्ठ है। चीनी के सम्बन्ध में अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए हमारी पुस्तक शहद के गुण और उपयोग और "जीवन तत्व" नामक दो पुस्तकें देखिये।

स्वभाव से ही अहित पदार्थ

उड़द, ग्रीष्म ऋतु, रेह का नमक, कटहल का फल, सरसों का साग, गोमांस (मांसाहारियों को इससे सावधान रहना चाहिए), भैंस की चरबी, भेड़ का दूध, कुसुम (बर्रे) का तेल और राब; ये पदार्थ स्वभाव से ही अहितकर होते हैं, कमजोर और मरीजों को इनसे सदैव बचते रहना चाहिए।

४—शुद्ध भोजन की आवश्यकता

भोजन ग्रहण करते समय इन बातों का ध्यान प्रत्येक व्यक्ति को रखना चाहिए। भोजन कितना किया जाय जिसमें शरीर की आवश्यकता की पूर्ति के लिए हमें पूरी कार्य शक्ति, पूरा बल मिले। हमारा शरीर सुडौल और हृष्ट पुष्ट बनने के लिए कौन से पदार्थ (स्टार्च, प्रोटीन, वसा, चीनी आदि) किस परिमाण में मिलाये जायँ? सबसे अधिक ध्यान इस बात पर होना चाहिए कि हमारे भोजन की सामग्री शुद्ध (Pure), प्राकृतिक और उस हद तक असली रूप में होनी चाहिए जितने हद तक हम उसे प्राप्त कर सकें।

उदाहरण के लिए हम रोटी और चावल लेते हैं। रोटी और चावल हमारे देश का प्रधान भोजन है। रोटी के लिए आटा समूचे गेहूँ का होना चाहिए, हाथ की चक्की का पिसा होना चाहिए। रोटी के लिए मैदे को स्थान नहीं मिलना चाहिए। मैदे में से चोकर छान कर अलग कर दिया जाता है। और जो कुछ बचता है उसमें कुछ प्रोटीन और स्टार्च बच जाता है। इस तरह के भोजन से हमारे शरीर की जरूरत पूरी नहीं होती। इस भोजन से हमारे तन्तु वह तत्व नहीं प्राप्त कर पाते जिनसे उनकी पुष्टि होती है और वे सशक्त होते हैं। यदि हम चावल खायँ तो केवल धान पर की भूसी ही अलग की गई हो चावल में समूचा कना लगा हो। कना को अलग कर देने से वह वैसे ही हानिकारी हो जाता है जैसे मैदा।

शिकागो यूनिवर्सिटी के रसायनशास्त्र के अध्यापक सर

फ्रेडरिक काउलैंड हापकिन ने अपने अन्वेषण के आधार पर लिखा है कि समूचे गेहूँ के आटे में कुछ ऐसे तत्व मौजूद रहते हैं जिनकी उपस्थिति के कारण हमारा शरीर अनाज के तन्तु बनाने वाली सामग्री का (Tissue-building elements) उपयोग कर पाते हैं। जब मैदा बनाया जाता है और मशीन की चक्की में आटा पिसा जाता है तब यही तत्व नष्ट हो जाता है। यही बात चावल के बारे में भी समझनी चाहिए। इसलिए हमें मिल वालों और मशीन की चक्की वालों से सावधान होना चाहिए और आटा पिसने और चावल कूटने के लिए जिन उपकरणों का उपयोग हमारे पुरखे करते थे उन्हीं को काम में लाना चाहिए और बिना छना आटा और बिना कना निकाले हुए चावल का ही उपयोग करना चाहिए।

यदि आप मक्खन और घी खाना चाहते हैं—और अवश्य खाना भी चाहिए—तो असली मक्खन और असली घी खाइए। बनावटी मक्खन जो अक्सर विलायत से बनकर आता है मत खाइए। इसी तरह घी के स्थान पर वनस्पति घी मत खाइए। यदि वानस्पतिक वसा आप को खानी है तो शुद्ध तिल का तेल या कड़वा तेल या बिनौले का तेल खाइए। अपने आपको धोखा देकर वनस्पति घी मत खाइए। यह एक व्यापारिक चीज है और व्यापार की दृष्टि से बनाई जाती है। इसके बनानेवालों को आपके स्वास्थ्य और रोग की रत्ती भर भी परवा नहीं होती। ये व्यापारी अपना माल बेचना चाहते हैं इसलिए तरह-तरह के विज्ञापन करते हैं।

वैसे ही दूसरी चीजों के बारे में समझिए। यदि आप गोश्त या मछली खाना ही चाहते हैं तो ताजा गोश्त या ताजा मछली बनवाकर थोड़ी मात्रा में खाइए। सड़ाया हुआ झिंगा या डिब्बों में बन्द विलायत से तैयार करके आया हुआ गोश्त मछली मत

खाइए। फल और तरकारियाँ हमेशा ताजा बिना सड़ा हुआ खरीदिए, और ताजा ही खाइए।

योरोप की देखादेखी हमारे देश में भी होटल, रिस्टोराँ, चाय की दूकानें खुल गई हैं। यह सभ्यता की निशानी है। यहाँ तेज कड़ी चाय, अण्डा, गोश्त, मछली, शराब, कबाब की बहार रहती है। इसके बाद बिसकुट आइसक्रीम आदि। यहाँ अक्सर डिब्बा-बन्द खाने मिलते हैं। इनको कोई सभ्यता की निशानी भले समझे परन्तु ये स्थान ऐसे हैं जहाँ से रोग मँहगे दामों में खरीदे जाते हैं।

विज्ञान का सहारा लेकर तरह-तरह के खाने व्यापारियों ने बनाये हैं। वैज्ञानिकों ने यह समझा कि यदि हमारा भोजन ऐसा हो जो आवश्यक गरमी और शक्ति दे जिससे शरीर का काम चलता रहे तो भोजन का काम और जरूरत खतम हो जाती है। इसी गलत सिद्धान्त के आधार पर तरह-तरह के डिब्बे बन्द भोजन और चिकनाइयाँ जैसे घी के बदले वनस्पति घी, मक्खन के बदले मार्गरीन बनने और काम में आने लगे।

सन् १९१५ में जर्मनी का एक जहाज जिस पर ५०० आदमी काम करते थे समुद्र में खो गया। उस पर खाने-पीने का वैज्ञानिक ढङ्ग से तैयार किया हुआ सामान काफी था। उस पर काम करनेवालों को खाने-पीने की कमी न थी। २५५ दिनों के समुद्र में रहने के बाद वह जहाज अमेरिका के एक बन्दरगाह में आया। इतने ही दिनों में उसके ११० आदमियों को दो प्रकार की बीमारियाँ हो गई। उनमें से कुछ मौत के मुँह में थे। डाक्टरों ने उस रोग को बेरी-बेरी बताया। इसके अलावा बचे हुए जहाज के लोगों में से कुछ न कुछ लोग नये बीमार पड़ने लगे। अन्त में जहाज के कैपटेन ने जहाज रोक कर चिकित्सा कराने की ठानी।

बारह डाक्टर रोग के कारण पर विचार कर रहे थे पर

व्यर्थ। मैक कैन ने जहाज के डाक्टर से मिलकर अपना विचार बताया, वह सहमत हो गया। मैक कैन साहब की राय में उनको बनावटी भोजन दिया जाता था जिसकी वजह से उनमें खनिज लवणों की कमी हो गई थी। उनको प्राकृतिक भोजन पर रखा गया, जहाज का भोजन बन्द किया गया, खनिज लवण भोजन द्वारा दिया गया। थोड़े ही दिनों में वे सब अच्छे हो गये।

जहाज के बीमार लोगों को यह खाना दिया गया।

फूल गोभी, पालक, गाजर, प्याज, सलजम, सब को एक साथ दो घण्टे उबाल कर रस निकाला गया। यही जूस काफी मात्रा में चोकरदार सादी रोटी के साथ दिया गया।

५० सेर चोकर १०० सेर पानी में १२ घण्टे भिगोया गया पानी १२० डिग्री के ताप पर रखा गया। फिर पानी छान कर प्रत्येक व्यक्ति को पाव-पाव भर सुबह दिया जाता था।

एक चम्मच गेहूँ का चोकर प्रत्येक व्यक्ति को दिया जाता था।

आलू धोकर चाकू से छील दिया जाता था। आलू फेंक दिया जाता था और छिलके को उबाल कर आध पाव रस प्रति दिन प्रत्येक व्यक्ति को दिया जाता था।

ताजे विना उबाले दूध में एक अण्डे की जरदी मिलाकर धीरे-धीरे चूस कर पीने को दिया जाता था। दूध इतना दिया जाता था जितना चूस-चूस कर आदमी पी सके। इस तरह दिन भर में ४ बार में ४ अण्डे प्रत्येक व्यक्तिको दिये जाते थे। प्रत्येक बार दूध पीने के एक घण्टे पहले एक पके सन्तरे का रस या नीबू का रस पानी में मिला कर दिया जाता था। परन्तु उसमें चीनी नहीं मिलाई जाती थी।

दोपहर को सूखी रोटी के साथ आधी छटांक गोश्त इसलिए दिया जाता था जिसमें उनके दिमाग पर यह असर पड़े कि उनको

गोश्त मिल रहा है क्योंकि उनको सिखाया गया था और उनका विश्वास हो गया था कि बिना गोश्त के आदमी जिन्दा नहीं रह सकता।

सेब का रस जितना चाहे उतना प्रत्येक व्यक्ति को मिलता था।

एक सप्ताह इस तरह का भोजन रखने के बाद तरकारियाँ और शोरवा दोनों मिलने लगा।

पनीर, अण्डे की सफेदी हर तरह की चिकनाई (वसा) मैदा, पुडिङ्ग, चीनी, भुना आलू, सैकरीन, पालिश चावल, पर्ल-बारली, सूखा मांस या मछली, भुना और खराब अन्न आदि अम्लता लाने वाली चीजें बन्द कर दी गई थीं।

ऊपर के वर्णन से ही प्राकृतिक भोजन और बनावटी भोजन का भेद मालूम हो जाता है। यदि प्राकृतिक भोजन रोग-मुक्त कर सकता है तो स्वास्थ्य की दशा में उसका इस्तेमाल करके आदमी अपने को बहुत ही बलशाली, दीर्घजीवी और नीरोग और पूर्ण स्वस्थ रख सकता है इसमें किसी को कोई शक नहीं होना चाहिए।

प्रकृति ने हमारे जन्म से पहले हमारे भोजन का निर्माण किया था और हमारे लिए सभी आवश्यक तत्वों को प्राकृतिक चीजों में भर दिया। जब मनुष्य ने विज्ञान का सहारा लेकर भोजन को विकृत करना आरम्भ किया तभी से अधिक रोग सताने लगे और ऐसे-ऐसे नये-नये रोग पैदा हो गये जिनका नाम निशान भी प्राचीन काल में न था।

५—शरीर का रासायनिक सङ्गठन

विद्वानों ने शरीर की रासायनिक परीक्षा करके निश्चय किया है कि हमारे शरीर के अन्दर मुख्यतः पाँच प्रकार के पदार्थ पाये जाते हैं—(१) बसा, (२) कार्बोज, (३) प्रोटीन, (४) जल और (५) खनिज लवण। इनमें से वसा, कार्बोज और प्रोटीन सजीव और निर्जीव दोनों पदार्थ से अर्थात हमें वनस्पति और प्राणियों से प्राप्त होते हैं, और जल और खनिज लवण निर्जीव पदार्थ से। इनके अलावा हमें स्वस्थ रहने के लिए विटामिन की आवश्यकता पड़ती है

वनस्पतियाँ कुछ तत्त्व तो पत्तों द्वारा वायु से ग्रहण करती हैं और कुछ तत्व जड़ द्वारा पृथ्वी से। इन्हीं दो प्रकार के मूल तत्व से प्रोटीन, वसा और कार्बोज आदि द्रव्य वे अपनी शक्ति से उत्पन्न कर लेती हैं। उन्हीं को शाकाहारी प्राणी खाते हैं और उन्हीं शाकाहारी प्राणियों को खाकर मांसाहारी अपना जीवन निर्वाह करते हैं। इस प्रकार यह कहा जा कसता है कि भोजन का मूल अवयव वनस्पतियों से ही प्राप्त होता है।

प्रोटीन

ईश्वर ने वनस्पतियों में विचित्र शक्ति दी है। ऊपर लिखा गया है कि वे मूल तत्व वायु, सूर्य और मिट्टी द्वारा प्राप्त करती हैं, किन्तु सब वनस्पतियों की प्रोटीन एक समान नहीं पाई जाती। उनमें अपनी खास विशेषता होती है। पशुओं में भी जो प्रोटीन पाई जाती है वह वनस्पति और मनुष्य में पाई जाने वाली प्रोटीन से भिन्न प्रकार की होती है। किन्तु विद्वानों ने परीक्षा द्वारा निश्चित किया है कि रासायनिक दृष्टि से उनमें कई समानताएँ

पाई जाती हैं। इस कारण सभी प्रोटीन नाम से ही पुकारी जाती हैं।

दाल में प्रोटीन होती है। वनस्पति वर्ग की प्रोटीन की भी आवश्यकता रहती है। दूध की प्रोटीन सर्वोत्तम समझी जाती है।

प्रोटीन के कार्य

हमारे शरीर की पूर्ति तीन मुख्य द्रव्यों से होती है वे हैं प्रोटीन, खनिज और जल। हमारा शरीर कोषों (cells) से बना है और उनका सबसे बड़ा भाग प्रोटीन का बना होता है। हमारे शरीर मस्तिष्क, नाड़ियाँ, फेफड़े, हृदय और पेशियाँ प्रोटीन से ही बनती हैं। हड्डियों में भी प्रोटीन का कुछ भाग पाया जाता है। वर्द्धन के लिए प्रोटीन की बहुत आवश्यकता होती है। बचपन में प्रोटीन की अधिक आवश्यकता पड़ती है। शरीर पचीस वर्ष की अवस्था तक बढ़ता रहता है, इस कारण इस अवस्था तक ऐसे भोजन की विशेष आवश्यकता पड़ती है जिनमें प्रोटीन की मात्रा अधिक होती है। दूध में प्रोटीन अधिक पाई जाती है और यह बच्चों के अधिक अनुकूल होता है। अतः बच्चों को दूध की प्रोटीन से वञ्चित रखना अच्छा नहीं। इससे उनके पोषण में बाधा उपस्थित हो जाती है।

ऊपर का वर्णन पढ़कर यह न समझना चाहिए कि प्रोटीन से हानि नहीं होती। यदि यह मात्रा से अधिक खाई जाय तो उससे हानि पहुँचती है प्लीहा और यकृत के विकृत हो जाने का भय रहता है।

प्रोटीन तीन प्रकार की पाई जाती है—

१—कुछ प्रोटीनें ऐसी हैं जो सुगमता से दुबारा गढ़कर शरीर के लिए उपयोगी बनाई जा सकती हैं।

२—कुछ ऐसी हैं जिनमें यह गुण नहीं पाया जाता अर्थात् इनको शरीर के लिए उपयोगी बनाने में कठिनाई पड़ती है।

३—कुछ प्रोटीनें ऐसी हैं जिनमें इस गुण का सर्वथा अभाव होता है अर्थात् उनको शरीर के लिए उपयोगी बनाने में बहुत कठिनाई पड़ती है। पहले प्रकार की प्रोटीन यदि थोड़ी मात्रा में भी खाई जाती है तो काम चल जाता है किन्तु शेष दो प्रकार की प्रोटीनों को अधिक मात्रा में सेवन करने की जरूरत पड़ती है।

रचना की दृष्टि से मनुष्य शरीर की प्रोटीन के अधिक निकट होने के कारण प्राणिज प्रोटीन की गणना पहले वर्ग में होती है और वनस्पति वर्ग की प्रोटीनों की गणना शेष दो वर्गों में। अण्डा, जिगर, मांस, मछली, दूध, दही, मट्ठा, पनीर, धान्यों के ताजे अंकुर, हरे पत्र शाक में पायी जानेवाली प्रोटीन उपादेय होती है।

बिना छना आटा, जौ, बाजरा, और मशीन से न साफ़ किये गये चावल, चना मटर, लोबिया (बोड़े) आलू, गाजर, शलजम, चुकन्दर, सब प्रकार के ताजे फल और मेवे, और शाकों के अलावे अन्यशाक—इनमें साधारण प्रोटीन होती है। आलू की प्रोटीन बहुत कम होती है किन्तु उपादेयता में दूध और मांसादि के बाद यह सर्वोत्तम होती है।

मटर, सेम, लोबिया आदि दालों में दूध आदि की अपेक्षा कहीं अधिक प्रोटीन होती है किन्तु दुष्पाच्य होने के कारण उसका अधिक अंश मलद्वारा बाहर निकल जाता है, दूसरे यह प्रोटीन शरीर के लिए बहुत अधिक उपयोगी भी नहीं होती है। मशीन से साफ़ किये गये चावल, मकई और अंडे में अनुपादेय प्रोटीन होती हैं, मूँगफली, तिल, खोआ चरबी और सरसों आदि के तेलों में प्रोटीन नहीं पाई जाती। केवल उपादेय वर्ग के ही

पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिए, बल्कि अपनी आर्थिक दशा की सुविधा के अनुसार दूसरे और तीसरे वर्ग के द्रव्यों का भी सेवन करना चाहिए। दोनों वर्ग की प्रोटीन मिलते रहने से प्रोटीन का पाचन अच्छी तरह होता है।

वसा

यह शरीर में थोड़ा बहुत प्रत्येक सेल में पायी जाती है परन्तु कुछ कोष वसा से भरी भी रहते हैं। उनको वसामय सौत्रिक तन्तु कहते हैं। इसका उपयोग शरीर में उष्णता उत्पन्न के लिए होता है। जो लोग दिमागी काम करते हैं उनके लिए इसकी खास तौर से जरूरत रहती है।

कार्बोज

यह पदार्थ शर्करा, श्वेतसार (मांड)—लाइकोजन की तरह का है। लकड़ी और शाक के रेशे भी श्वेतसार के ही बने होते हैं। इसे काष्ठोज कहते हैं। कार्बोज से भी शक्ति उत्पन्न होती है किन्तु वसा की अपेक्षा कम होती है। श्वेतसार और काष्ठोज प्राणी में नहीं पाये जाते। यह वनस्पतियों में मिलते हैं। श्वेतसार चावल में अधिक पाया जाता है। गेहूँ का छिलका उतारने पर भीतर जो श्वेत रङ्ग की चीज निकलती है उसमें अधिकांश श्वेतसार रहता है। शर्करा कई चीजों में पाई जाती है, जैसे दूध, अंगूर, ईख और जौ आदि। वस्तुतः स्टार्च या श्वेतसार जब चीनी के रूप में बदलता है तभी हम उसे पचा सकते हैं।

लवण

अनेक प्रकार के लवण शाक भाजियों से प्राप्त होते हैं।

जल

यह शरीर के लिए अत्यन्त आवश्यक पदार्थ है। हमारे शरीर में १०० भाग में ६४ भाग जल का होता है।

हमारे भोजन में पानी का अंश बहुत अधिक होता है फलों द्वारा भी हमें बहुत शुद्ध जल मिलता है।

भोजन में मूल अवयव कितने होने चाहिए ?

वसा और कार्बोज दोनों चीजें शक्ति उत्पन्न करने वाली हैं। यदि भोजन में वसा कम हो और कार्बोज अधिक हो तो काम चल जाता है। जिन लोगों को घी तैल आदि महँगे पदार्थ कम मिलें उन्हें श्वेतसार शक्कर जैसी कम कीमती चीजों को उपयोग में लाना चाहिए। यदि भोजन में कार्बोज कम हो तो उसका काम भी वसा से चल जाता है। किन्तु वसा देर में पचती है और कार्बोज उससे जल्द पचता है।

जवान मनुष्य को ४०-५० माशे से कम प्रोटीन न खानी चाहिए। विद्वानों ने स्थिर किया है कि १२० माशे से अधिक प्रोटीन खाने जरूरत नहीं है। मामूली मानसिक और शारीरिक परिश्रम करने वाले को ७५-९० माशे तक प्रोटीन, ८० माशे वसा और २३० माशे से २६० माशे तक कर्बोज की आवश्यकता पड़ती है। जिस भोजन में प्रोटीन कम रहती है उसका खानेवाला कमजोर होता है। उसी प्रकार अध्यापक, विद्यार्थी, डाक्टर, वकील आदि को, जो दिमाग़ से अधिक काम लेते हैं, प्रोटीन की अधिक आवश्यकता पड़ती है। इनके अतिरिक्त थोड़े लवण की जरूरत पड़ती है और शेष जल की। भोजन में चाय, कहवा, मसाले आदि की विशेष आवश्यकता नहीं पड़ती, मसाले थोड़ी मात्रा में खाये जा सकते हैं किन्तु चाय आदि की क़तई जरूरत नहीं है।

आटा	ऽ।।,	चावल	ऽ।,
दूध	ऽ।।।,	मांस	ऽ=,
घी	आधी छ०,	दाल	१ छटाक,

यह भोजन फौजी सिपाहियों के लिए अच्छा है। जो कसरती हैं उनके लिए इस प्रकार का भोजन अच्छा है। इस भोजन के परिमाण में परिवर्तन भी आवश्यकतानुसार किया जा सकता है।

गुरुकुल कांगड़ी के विद्यार्थियों को इस प्रकार भोजन दिया जाता है—

चावल २ छ०, आटा ७ छ०, घी १ छ०, दूध १२ छ०, दाल २ छ०, चीनी १ छ०, और शाक, यह भोजन १८ से २५ वर्ष की आयु के विद्यार्थियों के लिए, जिनका वजन १½ मन के लगभग हो अच्छा है।

भोजन-स्थान

भोजन का स्थान सदैव स्वच्छ होना चाहिए। उसका पात्र और हाथ पांव सब साफ़ होना चाहिए। भोजन पर मक्खियों को हरगिज न बैठने देना चाहिए। बाहर से आकर बिना हाथ पाँव धोये चौके में जाना स्वास्थ्य की दृष्टि से बुरा है। गन्दे पाँवों में सैकड़ों कीटाणु लगे रहते हैं और वे भोजन-गृह में पहुँचाए जाते हैं और वहाँ से भोजन द्वारा मनुष्य के पेट में पहुँचने की अधिक संभावना रहती है। बासी भोजन से रक्त में अम्लता बढ़ती है वह रोग उत्पन्न करने वाला होता है, दिमाग़ को खराब करता है साथ ही रोग भी उत्पन्न करता है। भोजन के तत्वों का वर्णन "हमारा भोजन" स्वास्थ्य के लिए शाक तरकारियाँ और फलाहार चिकित्सा में काफी विस्तार से लिखा जा चुका है इसीलिए यहाँ संक्षेप में लिखा गया है।

६—रक्षात्मक भोजन

हमारे शरीर के लिए जिस प्रकार प्रोटीन और स्टार्च की आवश्यकता है उसी प्रकार बल्कि उससे भी अधिक है रक्षात्मक भोजन की। यह रक्षात्मक भोजन और कुछ नहीं है ये हैं शाक तरकारियाँ, दूध, और फल। इनको रक्षात्मक भोजन इसलिए हम कहते हैं कि हमारा स्वास्थ्य कायम रखने में, हमें निरोग रखने में हमारा रोग दूर करने में इनका बहुत बड़ा हाथ रहता है। बिना इनकी मदद के हम अपने को स्वस्थ रख ही नहीं सकते। ये हमारी रक्षा करते हैं इसलिए इनकी आवश्यकता हमें बहुत रहती है। इनमें खनिज लवण और विटामिनों की अधिकता रहती है। ये क्षारमय होते हैं। हमारे शरीर में क्षार की मात्रा बढ़ाते हैं, अम्लता को कम करते हैं। शरीर में क्षार की मात्रा बढ़ना और अम्लता कम होना यही स्वस्थ रहने का रहस्य है, यही स्वास्थ्य की कुञ्जी है।

इन शाक तरकारियों और फलों को हमें होशियारी से खाना चाहिए इनको खाते समय बर्बाद न करना चाहिए। अकसर लोग इनको बर्बाद करके खाते हैं। आलू का छिलका न उतारिये। गाजर सेब, अमरूद, खीरा, ककड़ी, नाशपाती आदि जिन फलों के छिलके गूदे से लगे रहते हैं उनको चाकू से छील कर अलग करके मत खाइए। ऊपर से जरा-सा खुरच देने में उतना हर्ज नहीं है। ऊपर से खुरच देने से फल मुलायम हो जाते हैं। इनके छिलके के नीचे और छिलके में भोजन के वे तत्व रहते हैं जो आपको नीरोग रखते हैं आपको स्वास्थ्य प्रदान करते हैं। इनको फेंक दिया तो कौन सी होशियारी की? जरा सोचिए तो।

तरकारियों को बहुत मत उबालिए, उनमें पानी इतना अधिक डाल कर न उबालिए कि अन्त में पानी पसाकर आप नाली में फेंक दें और तरकारी खा जायँ। धीमी आँच पर तरकारी को सिर्फ इतना उबालें जिसमें वह मुलायम पचने लायक हो जाय, उसका जो पानी या शोरवा या रस बचे उसे खा जाइए। उस पानी में तरकारी के बहुत ही गुणकारी अंश घुल गये हैं वे आप को जीवन देंगे। उनका आदर कीजिए।

फल और शाक तरकारियों का उचित रूप में इस्तेमाल करने से कब्ज नहीं रह सकता और आदमी आवश्यकता से ज्यादा खा भी नहीं सकता क्योंकि इनमें फोक काफी मात्रा में रहता है और पेट जल्द भर जाता है। फल खाने का ठीक ढंग यह है कि इनको भोजन के साथ खाया जाय अथवा रोटी के बदलेमें खाया जाय। कच्ची खाई जानेवाली तरकारियाँ और शाक कच्चे ही खाये जायँ।

हम यह नहीं कहते कि आप एक ही तरहका भोजन करें जिसमें भोजन नीरस मालूम हो अथवा जीवनमें आनन्द ही न रह जाय। फल और शाक तरकारियाँ रोज बल्कि प्रत्येक समय के भोजनमें बदलते रहिए। सैकड़ों तरहके और सैकड़ों स्वादके सलाद बन सकते हैं।

सुबहके समय किसी फलके रस का नाश्ता करें। इसके लिए सन्तरे का रस, सेबका रस, नासपातीका रस, खीरेका रस, ककड़ी का रस, मुनक्केका पानी, टमाटरका रस आदि इस्तेमाल किये जा सकते हैं।

दो पहर के भोजनमें पाव डेढ़पाव फल और शाक तरकारीयोंका सलाद रखिए। थोड़ी रोटी या दलिया और दो तरह की तरकारियाँ रखिए। पीने के लिए एक दो प्याला फलों का रस भी रख सकते हैं।

चार बजे यदि भूख मालूम हो एक प्याला सन्तरे या टमाटर का रस अथवा मठा ले सकते हैं।

शाम को दो उबली तरकारियाँ कुछ सूखे मेवे थोड़ी रोटी और दूध ले सकते हैं। इस प्रकार का भोजन यदि आप लें तो विश्वास रखिये आपको हर एक विटामिन और खनिज लवण मिल रहे हैं। भोजन को प्राकृतिक तरीके से लेने से खनिज लवण और विटामिन बराबर मिलते रहते हैं।

फल और तरकारियाँ

फलों में उत्तम दरजे की चीनी तो मिलती ही है, विटामिन और खनिज लवण भी काफी मात्रा में मिलते हैं। फलों में लोहा, कैलशियम, फासफोरस सबसे उत्तम और शरीर में पचने लायक होते हैं। शाक तरकारियाँ और फल जितने ताजे होते हैं उतने ही लाभदायक होते हैं और उनमें विटामिन और खनिज लवण उतने ही अधिक और उत्तम मिलते हैं। सूखे हुए फल और शाक तरकारियों में विटामिन नहीं के बराबर होता है। फलों से दाँत मजबूत होते हैं, खून साफ होता है और हड्डियाँ मजबूत बनती हैं, शाक तरकारियाँ भी यही काम करती हैं। परन्तु शाक तरकारियों से हमें उत्तम चीनी नहीं मिलती। नट्स और सूखे मेवे में प्रोटीन अच्छी मिलती है। नट्स जैसे अखरोट, बादाम, मूँग फली, काजू आदि से उत्तम वनस्पति तेल मिलता है। कुछ डाक्टर ख्याल करते हैं कि मांस बहुत ताकतवर भोजन है। उन लोगों को फलों और नट्स के बारे में कोई अनुभव नहीं है वरना उनको अपना विचार बदलना पड़े।

कड़े आवरणवाले फल (नट्स Nuts)

कड़े आवरण वाले फलों में प्रोटीन और तेल या चिकनाई

का अंश अधिक होता है। इनमें स्टार्च बहुत कम होता है इनका प्रोटीन बहुत ऊँचे दरजे का होता है। दाल और अनाज के प्रटीन इनकी अपेक्षा घट कर होते हैं। इनमें विटामिन बी और ए अच्छे परिमाण में मिलते हैं। एक बात अवश्य है कि ये देर से पचनेवाले होते हैं। इनको अच्छी तरह चबाकर खाना चाहिए। अकेले इनको खाने से पाचन शक्ति में गड़बड़ी पड़ सकती है इसलिए दूसरी चीजों के साथ मिलाकर और खूब चबा कर ही इनको खाना चाहिए। ये ऊँचे दरजे के शक्ति उत्पादक पदार्थ हैं अखरोट, काजू, बादाम, नारियल, चिरौंजी, पिस्ता, मूँगफली ये सभी फल नट्स कहलाते हैं।

मलाबार के लोगों के लिए नारियल कल्प वृक्ष के समान है। वे उसकी शाखा, टहनी, छाल और फल सभी चीजों को काम में लाते हैं।

कच्चे नारियल की गरी खाने में मज़ेदार होती है। उसका पानी पीने के काम में आता है। उसमें खनिज लवण होते हैं। सब से महत्त्वपूर्ण बात यह है कि उस पानी में प्रायः सभी विटामिन रहते हैं। उस जल में थोड़ा पोषक तत्व भी होता है। इससे प्यास भी बन्द होती है और कै रुकती है! सूखे हुए नारियल में ५० प्रतिशत तेल और २५ प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट रहता है। आधी छटाँक नारियल से १६७ कैलोरी शक्ति उत्पन्न होती है। तेल के कारण ही नट्स अधिक शक्ति उत्पन्न करते हैं।

लोगों का ख्याल है कि नट्स अजीर्ण पैदा करते हैं। यह गलत बात है। लोग भर पेट भोजन करने के बाद अन्त में फल या नट्स खाते हैं इसीलिए वह ठीक पचते नहीं और अजीर्ण पैदा कर देते हैं। फल या नट्स को भोजन के बदले खाना चाहिए फल सुबह, दोपहर या शाम को किसी वक्त खाया जा सकता है।

फलों में साइट्रिक एसिड मैलिक, एसिड और टारटरिक एसिड ये तीन तरह की खटाइयाँ मिलती हैं इनका भी स्वास्थ्य पर सुन्दर प्रभाव पड़ता है।

खजूर, मुनक्का, केला आदि में उत्तम चीनी मिलती है। परन्तु केला अच्छी तरह पका हुआ होना चाहिए। तरबूजा और खर-बूजा पथरी निकालने में अद्भुत गुण रखते हैं। मुनक्का किश-मिश अञ्जीर आदि में उत्तम लोहा मिलता है।

फल भर पेट खाये जा सकते हैं। परन्तु फल खाकर फिर खाना न खाया जाय, सूखे मेवे और नट्स अकेले भर पेट खाना अच्छा नहीं। इनमें तेल होता है और अधिक खा लेने से अजीर्ण हो जा सकता है।

लोग अंगूर, सेब, नाशपाती, अनार, किशमिश, मुनक्के आदि कीमती फलों को ही उम्दा फल समझते हैं। जिनके पास पैसा हो वे इन्हें खूब खायँ कोई हर्ज नहीं। परन्तु, ककड़ी, खर-बूजा, पपीता, आम, जामुन, अमरूद आदि देशी और सस्ते फल भी बड़े काम के हैं। केला फलोंमें सर्वश्रेष्ठ फल है। केला तब खाना चाहिए जब वह गल जाय। गलजाने पर केले का स्टार्च ग्लूकोज में बदल जाता है तभी वह हमारे अधिक काम का होता है। केले के गुणपर मुग्ध होकर ही प्राचीनकाल के लोगों ने पूजा तक में उसको अंगीकार किया जिसमें लोग केले की पैदावार बढ़ावें।

अमरूद भी जाड़े में खूब खानेकी चीज है। अमरूदों में कैलशियम खूब मिलता है। जहाँ मौसमी फल खाने को मिलें वहाँ दो-चार दिन या १०-१५ दिन केवल फल खाकर रहना अच्छा है।

आँवला एक ऐसा फल है जिसकी उपयोगिता कभी भूली नहीं जा सकती। इसमें बहुत अधिक कैलशियम मिलता है।

दूसरी चीजों का कैलशियम पकाने या सुखाने से नष्ट हो जाता है, परन्तु यह बात आँवले में नहीं है। आँवला सुखाने पर भी उसमें कैलशियम बचा रहता है। आँवले के समय में थोड़ा बहुत आँवला रोज खाने का अभ्यास रखना अच्छा है। देश में आँवले का मुरब्बा बनाकर खाने का रिवाज है। आँवले से विटामिन सी की टिकिया बनाकर उन फौजियों के लिए भेजी जाती है जिनको शाक-तरकारीयाँ और भल प्राप्त करने की सुविधा नहीं होती। और इस प्रकार विटामिन सी की कमी पूरी की जाती है।

कटहल भी अच्छा और पुष्टिकारक फल है परन्तु यह देर में पचता है। जिनकी पाचनशक्ति कमजोर है उनको यह फल न खाना ही अच्छा है। कटहल खाने पर केला खा लेने से जल्द पच जाता है। यह रोगियों के खाने लायक फल नहीं है।

खट्टे फलों में सबसे महत्त्वपूर्ण फल नीबू है। भोजन करने के आधा घण्टा पहले एक गिलास पानी में आधा नीबू निचोड़कर पीने से पाचनशक्ति बढ़ती है। भूख लगती है, खाया हुआ अन्न ठीक हजम होता है। दाल में नीबू मिलाने से दाल पचने में सहायता मिलती है। परन्तु दाल में नीबू मिलाकर भात या रोटी के साथ खाना उतना अच्छा नहीं है गो कि लोग खाते हैं। यह जरूर है कि नीबू पहुँचने से पाचक रस अधिक शुद्ध बनने में मदद मिलती है परन्तु खटाई स्टार्च को—चावल और रोटी को—नहीं पचाती बल्कि पचने में रुकावट डालती है। इसीलिए खटाई के साथ चावल या रोटी खानेवाले को कभी-कभी अजीर्ण हो जाता है। फिर भी थोड़ा नीबू खाने के साथ खाना अच्छा ही है। भोजन के साथ थोड़ा नीबू का रस पानी में या योंही लेना अच्छा है इससे मुख की शुद्धि हो जाती है, और दाँत सड़ने से बचे रहते हैं। नीबू के रस से दाँत साफ़ करना बहुत अच्छा है।

टमाटर फल और तरकारी दोनों है। फल की तरह टमाटर कच्चा खाया जाता है। इसमें प्राय: सन्तरे के से गुण हैं। इसमें प्राय: सभी विटामिन और खनिज लवण मिलते हैं।

इमली भी हमारे यहाँ खूब होती है इसका उगयोग केवल अचार चटनी के ही लिए होता है। इमली की चीनी उत्तम होती है। इसमें विटामिन भी मिलते हैं और खनिज लवण भी काफी मात्रा में मिलते हैं। इमली सुखाकर सुरक्षित भी रखी जा सकती है। इमली का चीयां अलग कर देने से इमली बहुत कुछ सुरक्षित रहती है। इमली पना और शरबत बनाने के काम में भी आ सकती है।

शाक तरकारियाँ

भोजन के पदार्थों में शाक तरकारियों का एक खास स्थान है। शाक तरकारियों में प्रोटीन और स्टार्च अधिक मात्रा में नहीं होते। इनसे अधिक शक्ति भी उत्पन्न नहीं होती फिर भी इनका भोजन में वह महत्त्वपूर्ण स्थान है जिसकी कमी किसी और पदार्थ से पूरी ही नहीं हो सकती। शाक तरकारियों से हमें खनिज लवण और विटामिनों की प्राप्ति होती है। कोई भोजन सभी दृष्टियों से पूर्ण हो परन्तु उसमें यदि उचित परिमाण में खनिज लवण और विटामिन न हों तो वह भोजन स्वास्थ्य वर्द्धक नहीं हो सकता। हमें फलों से भी खनिज लवण और विटामिनों की प्राप्ति होती है परन्तु उतनी नहीं जितनी शाक तरकारियों से। पत्ते वाले शाक जैसे चौराई, पालक, बथुआ, धनिया, पोदीना, मेथी आदि इसके लिए खास तौर से महत्त्व के हैं।

परवल, पालक, चौराई, गोभी पात गोभी, प्याज, मूली, तोरई, टमाटर, लेटयुस (सलाद), नीबू आदि का स्थान सर्वोत्तम है। अलग अलग मौसम में अलग अलग तरकारियाँ यहाँ होती

हैं, और प्रायः उस मौसिम के अनुकूल गुण वाली होती हैं। तरकारियाँ जहाँ तक हो बहुत थोड़ी उबाली जायँ। अधिक तेज आँच पर पकाने से तरकारियों का विटामिन प्रायः सब नष्ट हो जाता है। जो लोग उबली हुई तरकारियाँ खाते हैं उनको समझ लेना चाहिए कि विटामिन उन्हें नहीं मिल रहा है। पर्याप्त विटामिन मिलने के लिए कुछ कच्ची चीजें भी खाई जानी चाहिए। कच्ची चीजों में ही जान होती है। जानदार चीज से ही जानदार खून बनेगा।

पालक के साग में लोहा और विटामिन ए-बी और सी मिलते हैं। गाजर विटामिन ए से भरा हुआ है। लहसुन और प्याज कीटाणु नाशक है। लहसुन और प्याज की चटनी खाने से कफ और खाँसी में लाभ होता है। लहसुन या प्याज और पोदीना अथवा धनिया की चटनी बनाकर तपेदिक वालों को खिलाया जाता है और उन्हें लाभ होता है। जिनको गले से या कफ में रक्त आता हो उन्हें लहसुन न खाना चाहिए। लहसुन और प्याज के मिलाने से दूसरी चीजों में भी स्वाद आ जाता है।

फूल गोभी कच्ची भी खाई जाती है और हलका उबालकर भी। इसमें विटामिन बी और खनिज लवण अधिक होते हैं। हरी पत्ती वाले शाक और हरे रङ्ग वाली तरकारियाँ हर दृष्टिकोण से उत्तम हैं। हिन्दुस्तान में शाक तरकारियाँ और फल बहुत होते हैं और सस्ते बिकते हैं। (१९४४ के लड़ाई के जमाने में नहीं) यदि लोग सही ढङ्ग से खाना-पीना जान जायँ तो सदैव सुखी और निरोग रह सकते हैं। शाक तरकारियाँ और फलों के बारे में हमने स्वतन्त्र रूप से पुस्तकें लिखी हैं। पाठकों को इन पुस्तकों से जानकारी हासिल करनी चाहिए।

कोमल पत्ती वाले शाक में लोहा अधिक होता है। इनमें प्रोटीन थोड़ी होती है परन्तु उत्तम कोटि की होती है। चना और

मटर की कोमल पत्तियाँ कच्ची खाई जाती हैं। पोदीना और धनिया की पत्तियाँ कच्ची चटनी के रूप में ली जाती है। मेथी की पत्ती कच्ची खाई जाती है। पालक कतरकर सलाद बनाकर खा सकते हैं। इच्छा होने पर उसमें टमाटर, प्याज, ककड़ी, किशमिश, गरी, दही इनमें से एक दो चीज मिला सकते हैं। दही के साथ पालक की पत्तियाँ अच्छी लगती हैं।

भोजन में इन कच्ची भाजियों को प्रति दिन स्थान मिलना चाहिए। कम से कम आध पाव पत्तीदार शाक सलाद के रूप में खाना चाहिए। इन पत्तियों को गरीबों का दूध समझना चाहिए। पत्तियाँ पौधों के लिए फेफड़े का काम करती हैं, इसलिए उनसे आक्सिजन भी हमें मिलता है। पौधों का सबसे पौष्टिक अङ्ग पत्तियाँ ही हैं। इसलिए उनसे सर्वोत्तम खाद्य-सामग्री मिलती है।

फल वाली तरकारियों का स्थान भी ऊँचा है परन्तु वे पत्तेदार शाक से उतर कर हैं, सूर्य की किरणें पत्तियों पर खुलकर पड़ती हैं पत्तियाँ सूर्य की किरणों के प्रभाव से ही विटामिन और खनिज लवण तैयार करती हैं। करमकल्ले की ऊपर की खुली पत्तियाँ जो कड़ी पड़ गई रहती हैं लोग निकालकर फेंक देते हैं। परन्तु उन्हीं पत्तियों में सबसे अधिक विटामिन और खनिज लवण होते हैं।

फल वाली भाजियों में परवल, लौकी, चिचिंडा, बैगन आदि अच्छी चीजें हैं। भिण्डी, करेला, तोरई, मूली आदि भी अच्छी है। गाजर जड़ होते हुए भी खाने योग्य चीज है, विलायती गाजर जो पीले रङ्ग की होती है अधिक अच्छी होती है। पीले रंग की जड़ें या फल प्रति दिन कुछ खाते रहना चाहिए। ऊपर के वर्णन को ध्यान में रखकर स्वस्थ रहने के लिए भोजन चुनना चाहिए। रोगावस्था में भी इन सिद्धान्तों को ध्यान में रखकर भोजन चुनने से जल्द स्वास्थ्य प्राप्त होगा।

७—रोगों के कारण और उनके इलाज के साधन

रोगों के कारण के सम्बन्ध में थोड़ा बहुत अन्तर विभिन्न चिकित्सकों में है। आयुर्वेद सभी रोगों के कारण दोषों—वात पित्त और कफ का बिगड़ना, उनमें उभाड़ पैदा होना अथवा उनका परिमाण से ज्यादा घट बट जाना मानता है। ये दोष अथवा वात पित्त कफ अनेक प्रकार के सदोष भोजन, संयोग विरुद्ध भोजन, अनियमित भोजन तथा रहन-सहन की गलतियों के कारण बढ़ते-घटते, उभड़ते और बिगड़ते हैं। वात, मूत्र, पाखाना, हुचकी, डकार, वमन आदि वेगों के रोकने से भी रोग पैदा होते हैं, देर सबेर, सोने जागने, अधिक परिश्रम करने या बिलकुल ही परिश्रम न करने के कारण भी रोग पैदा हुआ करते हैं। इसी अन्तिम कारण को आयुर्वेद में प्रज्ञापराध के नाम से लिखा गया है। इसका विस्तार से वर्णन हम यहाँ नहीं करना चाहते।

प्राकृतिक चिकित्सक यह मानते हैं कि एक प्रकार का विजातीय पदार्थ या विषैला पदार्थ हमारे भोजन और हमारी रहन-सहन की गलतियों से शरीर में इकट्ठा हो जाता है और वही रोग पैदा करता है। अमेरिका के कुछ डाक्टर यह मानते हैं कि यूरिक एसिड नामक विषैला पदार्थ शरीर में इकट्ठा होने से रोग उत्पन्न होता है। यह विष भोजन की गलतियों से होता है। ये पद्धतियाँ आयुर्वेद के सिद्धान्तों को शब्दान्तर द्वारा ध्वनित करती हैं। वस्तुतः गलत भोजन और गलत रहन-सहन के कारण शरीर की रोग निवारक शक्ति घट जाती है, शरीर से मल या विकार निकालने की क्रिया में अन्तर पड़ जाता है, इस कारण शरीर में

विष की मात्रा कुछ बढ़ जाती है, दूसरे हमारे गलत भोजन के कारण भी विष की मात्रा इकट्ठी होती है। ये सब मिलकर रोग के कारण हो जाते हैं।

आजकल एक नया सिद्धान्त यह निकला है कि हमारे भोजन से रक्त में अम्लता बढ़ती है वह अम्लता रोग का कारण होती है। उस अम्लता को दूर करने के लिए हमें अपने भोजन में क्षार बढ़ानेवाले पदार्थ रखने चाहिए। क्षार बढ़ानेवाले पदार्थों में शाक तरकारियों और फलों का खास स्थान है। इस विषय की विशेष जानकारी के लिए हमारी पुस्तक 'हमारा भोजन' भी देखना चाहिए।

क्षार और अम्लता का सिद्धान्त सुश्रुत के जमाने में स्थिर हो चुका था। सुश्रुत ने स्पष्ट लिखा है कि क्षार से अम्लता नष्ट हो जाती है। यहाँ तक कि कास्टिक सोडा बनाने और उसके सुरक्षित रखने का सर्व प्रथम वर्णन हमें सुश्रुत में ही मिलता है और उसीसे संसार ने सीखा है। ऋतुचर्या के वर्णन में वर्षाऋतु की चर्या लिखते समय स्पष्ट लिखा है कि इस ऋतु में जल और वनस्पतियाँ अम्ल रसयुक्त हो जाती हैं और रोग पैदा करती हैं। किसी ऋतु में भी पानी में अम्ल स्वाद नहीं आता। इससे स्पष्ट प्रगट है कि पचने के बाद अथवा रक्त में अम्लता पैदा करने के विषय में ही वहाँ उल्लेख है। इससे हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि एसिड और अलकलाइन या अम्ल और क्षार का सिद्धान्त नवीन नहीं, प्राचीन है। और यदि आयुर्वेद से चुराया हुआ न हो तब भी प्रभावित तो अवश्य ही है।

रोगों के पैदा करनेवाले कारणों में कीटाणुओं का हाथ भी आजकल माना जाने लगा है। कीटाणुओं के सम्बन्ध में हम अपना मत तपेदिक और जुकाम नामक अपनी पुस्तकों में काफी विस्तार से लिख चुके हैं उन्हीं को यहाँ दुहराने से कुछ

लाभ नहीं। कीटाणुओं के सम्बन्ध में इतना याद रखना चाहिए कि जब हमारी जीवनी शक्ति घट जाती है, जब वात पित्त कफ विषम हो जाते हैं तभी कीटाणु हमारे अन्दर प्रवेश करके जीवित रह सकते हैं। इसलिए कीटाणुओं से बचने के लिए हमें सब से पहले अपनी रहन-सहन ठीक करके अपनी जीवनी शक्ति ही बढ़ाने का प्रयत्न करना चाहिए।

आजकल गरीबी और भोजन की खराबी, रोटी के लिए अधिक परिश्रम करना तथा पहले के बताये प्रज्ञापराध के कारण लोगों की जीवनी-शक्ति क्षीण हो जाती है, इस कारण कीटाणुओं के सम्पर्क में आने पर वे अपने को निरोगी या सुरक्षित नहीं रख सकते। और सैकड़ों आदमी कीटाणुओं के सम्पर्क में आ जाने से ही तपेदिक, हैजा, शीतला आदि भयानक रोगों से पीड़ित हो जाते हैं, यदि वे कीटाणुओं के सम्पर्क में न आते तो नीरोग और सुखी रहते। इसलिए हमें इन कीटाणुओं के सम्पर्क में आने से भी बचना हो चाहिए। परन्तु यह प्रयत्न वैसा ही है जैसे बारूद भरे मकान को दियासलाई के सम्पर्क से बचाना। जिसके शरीर में विकार भरा है, जिसकी जीवनी-शक्ति क्षीण हो चुकी है, वह कबतक कीटाणुओं के डर से छिपा रहेगा। उसका जीवन सदैव खतरे में है। सौभाग्य से वह कीटाणुओं के सम्पर्क में न आवे यह दूसरी बात है। बहुत से बारूद भरे मकान भी चिनगारी के सम्पर्क में न आने से बहुत दिनों तक सुरक्षित रहते हैं।

चिकित्सा के अनेक साधन हैं और सबसे कुछ न कुछ काम निकलता ही है। अनेक तरह की विषैली और निर्विष औषधियाँ इसी काम के लिए हैं। तरह-तरह के इंजेकशन इसी काम के लिए बने हैं। माजून गोली और कुश्ते इसी काम के लिए इस्तेमाल किये जाते हैं। इन सबके प्रयोग करनेवाले लोग अपनी-अपनी चीज़ों की तारीफ़ किया करते हैं।

आयुर्वेदीय चिकित्सा पद्धति यह है कि जिस कारण से रोग पैदा हुआ है उसे पहले दूर किया जाय। जैसे किसी को दूषित भोजन के कारण यदि रोग हुआ है तो उसके भोजन में उचित सुधार या उपावस या जो व्यवस्था उचित समझी जाय की जाय। उसके बाद यह करना चाहिए कि जो दोष इकट्ठे हो गये हैं उनको दूर किया जाय, उन्हें निकाल दिया जाय और तीसरा काम यह किया जाय कि इन कारणों से जो विकार पैदा हो गया हो यदि वह उचित आहार विहार और दोषों के निकालने पर भी न गया हो तो उसे दूर किया जाय। यह चिकित्सा की सही विधि है इसके अनेक साधन हैं जिनका विस्तृत वर्णन आयुर्वेद के प्राचीन ग्रन्थों में ध्यान पूर्वक पढ़ने पर मिलेगा। चिकित्सा की जो दूसरी पद्धतियाँ हैं वे केवल रोगों को दबाने या लक्षणों को मिटाने का प्रयत्न करती हैं। जैसे किसी के सर में दर्द है उसे स्प्रिन खिलाने से दर्द बन्द हो जाता है। इस तरह के इलाज में न तो दोष या विकार शरीर से बाहर होते हैं और न उचित खान-पान की ही व्यवस्था की जाती है। इसी कारण रोग दुबारा हो जाते हैं। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि एक रोग दब जाता है और दूसरा कोई भयानक रोग उत्पन्न हो जाता है। यह शरीर में इकट्ठा हुए विकारों की महिमा है।

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि उचित भोजन और उपवास आदि के द्वारा लाभ हो जाता है परन्तु भीतर के विकार कुछ शेष बचे रह जाते हैं ऐसी हालत में ऐसा प्रतीत होता है कि रोग दूर हो गया परन्तु वही शेष बचे हुए विकार कभी-कभी फिर बढ़ जाते हैं और कोई रोग पैदा कर देते हैं। इसलिए इलाज का प्रमुख ढङ्ग यही है कि उपवास और भोजन सुधार के साथ-साथ दोषों को भी निकाल दिया जाय। आयुर्वेद में स्पष्ट लिखा है:—

दोषाः कदाचित् कुप्यन्ते जेता लंघन पाचनैः ।
शोधनैः निर्हरेद्येषां न तेषां पुनरुद्भवः ॥

इस श्लोक का भावार्थ ऊपर समझा दिया गया है । दोषों के निकालने के अलग-अलग तरीके हैं सबका विस्तृत वर्णन आयुर्वेद की प्राचीन पुस्तकों में मिलेगा । इस पुस्तक में केवल भोजन द्वार रोगों को दूर करने का विधान बताया गया है इसलिए यहाँ हम इसी विषय पर जरा विस्तार के साथ विचार करना चाहते हैं जिसमें पाठकों को यह विषय अच्छी तरह ज्ञात हो जाय ।

जो भोजन हम करते हैं उसका रस बनकर रक्त बनता है । वही रक्त शरीर में भ्रमण करके सारे शरीर का पोषण करता है । यदि भोजन में वे सब चीजें उचित मात्रा में मौजूद हों जिनसे हमारे शरीर का पोषण होता है, तो शरीर पुष्ट होगा और नीरोग भी रहेगा । परन्तु इस प्रकार का चुनाव बहुत कम लोग कर पाते हैं । दूसरे जो भोजन हम करते हैं उसका कुछ अंश अनपचा ही बच रहता है, शरीर उसका कोई उपयोग नहीं कर पाता । वही बचा हुआ अंश शरीर में जहर पैदा करता है क्योंकि वह सड़ता है । उसको निकालने के लिए शरीर अनेक प्रयत्न करता है जिसे प्रायः रोग कहते हैं । अनियमित भोजन, बहुत अधिक भोजन, बार बार भोजन करना और असंतुलित भोजन करना, कभी कम कभी बेशी भोजन करना, कभी ८ बजे सुबह खाना, कभी दो बजे दिन को तीसरे पहर खाना, यह भोजन के दोष हैं । इनसे ही रोग पैदा होते हैं क्योंकि इन कारणों से शरीर की रोग-निवारक शक्ति घटती है, शरीर में जहर या विष की मात्रा इकट्ठी होती है वात पित्त कफ विषम हो जाते हैं उनका अनुपात बिगड़ जाता है और शरीर रोगी हो जाता है ।

इसलिए इलाज के लिए जो भोजन चुना जाय उसमें इस बात का ध्यान अवश्य रखना चाहिए कि वह इस प्रकार का हो जो दोषों को या विकारों को निकाले, शरीर में स्थित विष को प्रभावहीन करे, शरीर में शक्ति लावे और शरीर के लिए सभी आवश्यक तत्वों से पूर्ण भी हो।

सभी रोग एक तरह के नहीं होते और न तो सभी रोगी एक तरह के होते हैं। इसलिए सब रोगियों को और सब रोग में एकही तरह का भोजन नहीं दिया जा सकता। कुछ रोग ऐसे होते हैं जिनमें भोजन की बिलकुल आवश्यकता नहीं होती, निराहार रहना आवश्यक होता है, यदि कुछ दिया जाय तो पतले रसवाले फलों का रस। इस प्रकार का रोग ज्वर है। अतिसार संग्रहणी में भी आरम्भ में उपवास की आवश्यकता रहती है। कुछ रोगों में परिमित आहार की आवश्यकता रहती है जिसमें नया जहर इकट्ठा न होने पावे और पहले का इकट्ठा हुआ विष धीरे-धीरे निलक जाय।

फल और शाक तरकारियों में विष मारने और उनको बाहर निकाल देने का गुण होता है इसलिए हलके फलों का इस्तेमाल रोग दूर करने के लिए होता है। शाक तरकारियों में विटामिन और खनिज लवण सभी तरह के पाये जाते हैं और खूब पाये जाते हैं, इनका रस भी निकालकर काम में लाया जाता है। इसीलिए इनका इस्तेमाल रोगों के इलाज में खूब होता है। जो लोग फल और सादी उबली तरकारियाँ तथा तरकारियों का रस काफी अधिक मात्रा में इस्तेमाल करते हैं और रोटी चावल आदि कम खाते हैं उनका रक्त शुद्ध रहता है, उनके रक्त में सभी आवश्यक पदार्थ मिलते हैं, उनके रक्त में अम्लता नहीं बढ़ने पाती क्षारता रहती है, इसलिए वे स्वस्थ रहते हैं।

जो लोग रोगी हैं वे भी इन्हीं सिद्धान्तों पर अपना भोजन

निश्चित कर सकते हैं। हलके फलों और तरकारियों में किशमिश, छुहारे, अंजीर, खूबानी, सन्तरे, सेब, अनार, टमाटर, पालक, नेनुआ, मूली, सलजम, नीबू आदि सर्वश्रेष्ठ हैं। रोगी की प्रकृति और उनकी आवश्यकता का ख्याल रखकर इनका उपयोग होना चाहिए। इन फलों के अलावा दूसरे मौसमी फल जैसे फालसा, अमरूद, पपीता, जामुन, आम, लीची आदि भी अच्छे फल हैं जिन रोगियों को भोजन दिया जा सकता हो और जिनको उपवास की आवश्यकता नहीं है, उन्हें इन फलों को दिया जा सकता है। जिन लोगों को कोई रोग नहीं है और जो अपने को स्वस्थ रखना चाहते हैं वे यदि एक समय दोपहर को रोटी, दो तरह की सादी बनी सब्जियाँ कुछ फलों और कच्ची खाई जानेवाली सब्जियों के सलाद और रोटी खायँ और शाम को फल और दूध लें। सुबह यदि नाश्ते की आवश्यकता हो तो किशमिश अथवा अन्य कोई मीठा मौसमी फल थोड़ा सा खा-कर पाव डेढ़पाव दूध पी सकते हैं। इस प्रकार के भोजन से कुछ ही दिनों में स्वास्थ्य बहुत ही सुन्दर हो जाता है, चेहरा सुर्ख हो जाता है, नाखूनों में लाली दौड़ जाती है, शरीर का पीलापन दूर हो जाता है, रोग निवारक शक्ति बढ़ जाती है यदि शरीर में कोई रोग हुआ हो तो वह भी भाग जाता है।

रोगों को दूर करने के सम्बन्ध में जो रोटी, चावल, गोश्त, मछली और अन्य चीजों के खाने का विधान बताया जाता है वहाँ भी यही समझना चाहिए कि फलों और शाक तरकारियों की अधिकता उन लोगों को लाभदायक होगी परन्तु अपने देश, अपनी आदत, अपनी रुचि और अपने रोग के अनुसार वे उन चीजों को भी ले सकते हैं। जितना भोजन किया जाता है उसका तीन चौथाई के करीब फल और शाक तरकारियों से ही पूरा करना चाहिए; शेष एक चौथाई में ही अन्य चीजें रखनी

चाहिए। भोजन का यह क्रम रोगों को मार भगाने में रामबाण का काम करता है, शरीर के जहर को निकाल देता है, और वह स्वास्थ्य प्रदान करता है जिसका सुख पहले कभी भी प्राप्त नहीं था। इस पुस्तक में भी जहाँ कहीं रोटी और गोश्त आदि देने के लिए लिखा गया है इसी नियम के अनुसार देना चाहिए।

भोजन करते समय ऋतुओं का ध्यान रखना भी आवश्यक है साथ ही किस भोजन के साथ किस चीजका मेल है और किस चीज का मेल नहीं है यह भी जानना जरूरी है बिना इसके जाने अपने को स्वस्थ रखने में कठिनाई पड़ती है। भोजन ठीक समय पर भूख लगने पर करना चाहिए। एकबार भोजन करने पर जब तक वह पच न जाय दुबारा भोजन नहीं करना चाहिए। न तो बार-बार खाते रहना चाहिए। न तो एक-बार ही इतना अफर कर खा लिया जया कि अजीर्ण हो जाय। एकबार एकही तरह का भोजन लिया जाना चाहिए यह नहीं कि रोटी, दाल, दूध, गोश्त, मछली सब एक ही साथ खाय। यह आदत रोगी बनाने वाली है। इन सब बातों पर हमने अपनी पुस्तक 'हमारा भोजन' में काफी प्रकाश डालने का प्रयत्न किया है पाठकों को वहीं देखना चाहिए।

८—आहार और दन्त रोग

सांसारिक सुख हमें तभी प्राप्त हो सकते हैं जब हमारा शरीर पूर्ण स्वस्थ हो। स्वास्थ्य और दाँतों से बहुत अधिक सम्बन्ध है, दाँतों की नीरोगता पर हमारा स्वास्थ्य बहुत कुछ अवलम्बित है। यही नहीं, यह मुँह को सुन्दर बनाने में भी पूर्ण रूप से सहायक है। दाँतों के गिर जाने से चन्द्रमा-सा मुख कान्तिहीन हो जाता है, आवाज़ साफ़ नहीं निकलती। इस कारण दाँतों की रक्षा अत्यन्त आवश्यक है।

दाँतों का सुरक्षित रखना बहुत कुछ हमारे आहार पर अवलम्बित है। यदि मनुष्य बुद्धि का सदुपयोग करके भोजन करे तो जन्म भर अपने दाँतों को सुरक्षित रख सकता है, और उसे किसी दन्त-चिकित्सक के पास जाने की आवश्यकता नहीं। दाँतों के लिए हानिकारी भोजन और आलस्यपूर्ण भोजन करने का ढङ्ग—इन दो कारणों से सुन्दर दाँतों की बहुत हानि होती है, दाँतों की व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं। दाँतों के रोगी होने के कारण भयानक मन्दाग्नि और उससे सम्बन्ध रखने वाले और भी कई रोग जैसे दुर्बल स्वास्थ्य, पाण्डु रोग, पेट सम्बन्धी व्याधियाँ, और और कई व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं।

दाँतों के दूषित होने का प्रभाव रक्त, नसों (Nerves) मांसपेशियों और शरीर के सभी अवयवों पर पड़ता है। सचमुच अच्छे और मज़बूत दाँतों का अधिकार में आना एक अमूल्य अधिकार है। दाँत तभी सुन्दर मज़बूत दशा में रखे जा सकते हैं जब कि उचित भोजन उचित ढंग से किया जाय।

सन् १९२६ के ब्रिटिश मेडिकल जर्नल (British Medical

Journal) में इसी विषय पर एक उपयोगी लेख प्रकाशित हुआ था। उसका सार इस प्रकार है—

(१) बच्चों के दन्त-क्षय का कारण यह है कि उनको सदोष भोजन दिया जाता है, जिसके कारण उनके दाँत अपूर्ण बनते हैं।

(२) आहार सामग्री, जिसका प्रभाव सुदृढ़ और सुन्दर दाँतों के उत्पन्न करने में पड़ता है, बच्चों के उद्भवित दाँतों को ऐसी शक्ति देती है जिससे वे कोथत्व (दाँतों की सड़न) का मुक़ाबला कर सकें।

(३) ऐसे भोजन जिनमें वसा (Fat) हो, जैसे दूध, अंडे की ज़र्दी, मक्खन, पशु और मछली की वसा, विशेषतः काड-लिवर आयल (Codliver oil) सुदृढ़ दाँत निकलने में सहायक होते हैं। जई के आटे से दूषित दांत उत्पन्न होते हैं।

कैलशियम और विटामिन बी तथा सी दाँत पर ख़ास असर डालते हैं। ऐसी चीजें भोजन में ख़ासतौर से होनी चाहिए।

गर्भावस्था में माता के भोजन का भी बच्चे के दाँतों पर काफ़ी प्रभाव पड़ता है।

एक संस्था में दाँत सम्बन्धी अनुभव किये गये थे। कुछ समवयस्क बालक तीन विभागों में विभक्त किये गये थे। पहले विभाग के बच्चों को ऐसा आहार दिया गया जिसमें दूध, काड-लिवर आयल, थोड़ा सा जई का आटा, और कुछ और भोजन-पदार्थ थे। दूसरे विभाग के बच्चों के भोजन में जई का आटा अधिक था और तीसरे विभाग के बच्चों को वैसा ही आहार दिया जाता था जैसा प्रायः अन्य सभी बच्चे पाते थे। कुछ महीनों के पश्चात् जब उन बच्चों के मुख की परीक्षा की गई तो ज्ञात हुआ कि जिनको काडलिवर आयल दिया जाता था उनके दाँत बहुत अच्छी दशा में थे और जिनको जई का आटा दिया जाता था उनके दाँतों की दशा शोचनीय थी।

दन्त-चिकित्सा के विशेषज्ञ डा० सिम बैलेस (Dr. Sim Wallace) ने अपने एक व्याख्यान में कहा था—"आहार सम्बन्धी ग़लतियों का सुधार दन्त-रक्षक मंजन (Antiseptics) या टुथ ब्रशों से कभी नहीं हो सकता।"

जिस प्रकार अंग्रेजी सभ्यता के प्रभाव से हम में अंग्रेजों की और बुराइयों का प्रवेश हुआ है उसी प्रकार हममें आहार-सम्बन्धी दोष भी आ गये हैं। इस अंग्रेजी सभ्यता से हमने दोष ही अधिक सीखे हैं उसके गुणों को कम अपनाया है। सच-मुच गुलाम जाति बुराइयों की ही नक़ल कर सकती है।

अंग्रेजी सभ्यता के हिमायती अब आहार भी उन्हीं जैसा करने लगे हैं। ऐसा भोजन जो बिना चबाये ही निगल लिया जा सके, जिसमें दाँतों को परिश्रम न करना पड़े, चाहे स्वादिष्ट कितना भी हो दाँतों को हानि पहुँचाये बिना नहीं रह सकता। जिस प्रकार हमारे शरीर को स्वस्थ और दृढ़ रखने के लिए व्यायाम आवश्यक है उसी प्रकार दाँतों को अच्छी स्थिति में रखने के लिए यह आवश्यक है कि उनसे ख़ूब काम लिया जाय। जहाँ उनसे काम लेना बन्द किया गया वहीं उनकी दुर्बलता का आरम्भ हुआ। पकान्न जो दूध, आटा और किशमिश आदि के संयोग से बनता है, गीली रोटी और अन्य चिकने कोमल पदार्थ दाँतों के लिए अत्यन्त ही हानिकारी हैं और इन भोजनों का पाचनक्रिया पर कैसा घातक प्रभाव पड़ता है इसका तो कहना ही क्या! ऐसा देखा जाता है कि लोगों की रुचि ऐसे भोजन की ओर अधिक है जिनको चबाने का कष्ट न करना पड़े। लोग कड़े छिलके वाले पदार्थ या परतदार चीजें खाने का कष्ट ही नहीं उठाते। निस्सन्देह स्कोन्स (Scons) और टी केक्स (Tea cakes) जो मक्खन लगा कर भून ली जाती हैं, चाय पीने के समय स्वादिष्ट होती हैं किन्तु उनका प्रभाव दाँतों पर

अच्छा नहीं पड़ता। आहार सम्बन्धी यही बुराई हमने औरों से सीखी है।

कीमा (Mince) और रिसोल (Rissole, मांस, रोटी और अंडे की जर्दी से बना पदार्थ) ऐसे पदार्थ हैं जिनको अधिक चबाने की आवश्यकता नहीं पड़ती, ये बिना चबाये ही पेट में सरक जाते हैं। इस कारण इनके खाने में दाँतों को परिश्रम नहीं पड़ता और उनमें लार मिश्रण न होने के कारण उनका पाचन-क्रिया पर बुरा प्रभाव पड़ता है। ये चीजें दाँत को नुकसान पहुँचानेवाली हैं।

स्कूल में शिक्षा पानेवाले विद्यार्थियों के दाँतों की यदि परीक्षा ली जाय तो थोड़े से ही विद्यार्थी ऐसे मिलेंगे जिनके दाँत अच्छी दशा में होंगे। अधिकांश विद्यार्थियों के दाँत सदोष ही मिलेंगे। इसका प्रधान कारण यह है कि उन्हें दाँतों के स्वस्थ रखने की समुचित शिक्षा नहीं मिलती, वे बेचारे दाँतों की रक्षा करने वाले प्राकृतिक उपायों से अनभिज्ञ रहते हैं। दूसरे दरिद्रता के कारण या अज्ञानता के कारण उनके दाँतों को लाभप्रद भोजन नहीं मिलता। अंग्रेजी सभ्यता से प्रभावित माता पिता के बच्चे चाय, काफ़ी आदि पीने के दुगुण अपने माता पिता से सीखते हैं, और देहात के ग़रीब बच्चे अज्ञानता और ग़रीबी के कारण अपने दाँतों को नष्ट कर देते हैं क्योंकि पैसे की कमी के कारण वे उचित भोजन के उपकरण नहीं जुटा सकते। अधिक गुड़ और चीनी खाने के कारण दाँत जल्द खराब होते हैं।

यह ऊपर बतलाया जा चुका है कि दाँतों की रक्षा के लिए वे ही भोजन अत्यन्त उत्तम होते हैं जिनके चबाने में दाँत को अधिक परिश्रम करना पड़ता है। परन्तु साथ ही यह भी स्मरण रखना चाहिए कि भोजन में दाँतों को सुन्दर और पुष्ट बनाने

वाले 'विटैमिन' का होना भी अत्यन्त आवश्यक है। ऐसे तत्व निम्नलिखित पदार्थों में पाये जाते हैं—

दूध, अण्डे, वसायुक्त मांस, मटर, सेम, मसूर, गोश्त और ताज़े हरे फल तथा तरकारी। हरी तरकारी में एक विशेषता यह होती है कि वे अकसर सूत्रमय (रेशेदार) होती हैं जिनके कारण उनको ख़ूब चबाना पड़ता है, बिना अच्छी तरह चबाये वे निगली ही नहीं जा सकतीं। इस प्रकार इनके खाने से दाँतों को पूर्ण परिश्रम पड़ता है। मूली, देव कांडर (Watercress) चुकंदर (beet root), सेब, नाशपाती, अमरूद आदि कच्चे खाने के लिए उत्तम पदार्थ है।

बच्चों के दाँतों के उत्तम उद्भेद (निकलने) के लिए उन्हें उत्तम भोजन मिलना चाहिए, और दाँतों की सफ़ाई की आदत बचपन से ही डालनी चाहिए। छोटे बच्चों को चबा कर खाने की आदत डालनी चाहिए। आठ मास की आयु से ही बच्चे को सेब के टुकड़े आदि चबाने के लिए दिये जा सकते हैं। सूजी की रोटी, बिसकुट आदि भी दिये जा सकते हैं। हलवा आदि पतले पदार्थ, भिगोई हुई रोटी आदि न देना ही अच्छा है। भोजन के नरम पदार्थों में दाँतों पर परिश्रम डालनेवाली कोई चीज़ नहीं रहती और ऐसा भोजन देने में बच्चों के ऐसे ही निगल जाने का भय रहता है। यों ही निगले हुए भोजन का परिणाम पाचन-क्रिया पर बड़ा भयानक होता है। भोजन निगल जाने का दुष्परिणाम मन्दाग्नि है।

प्रत्येक कौर को अच्छी तरह चबा कर निगलना चाहिए। पाचन-क्रिया का काम मुँह से ही आरम्भ हो जाता है। बिना चबाये भोजन के पचाने के लिए पेट अपनी शक्ति भर प्रयत्न करता है, किन्तु जितना अंश वह पचा नहीं पाता वह आँतों पर व्यर्थ का दबाव डालता है जिससे स्वास्थ्य नष्ट होता है। भोजन

चबाने के विषय में बहुत से लोग कहते हैं कि उन्हें समय नहीं मिलता, इस कारण वे रोटियों को पेट में इस प्रकार भर लेते हैं जिस प्रकार कपड़े तह करके बक्स में रख लिए जाते हैं। ऐसे लोगों को यह बतला देना आवश्यक है कि जितना समय भी वे भोजन करने के लिए दे सकते हों दें, किन्तु बिना चबाये कोई भी कौर भीतर न जाने दें। मान लीजिए आप भोजन के लिए २० मिनट समय दे सकते हैं। उतने ही समय में अच्छी तरह चबा कर जितना भी भोजन आपके पेट में जायगा उससे जो पोषण प्राप्त होगा वह बिना चबाये ही निगले हुए भर पेट भोजन से कहीं अधिक होगा। और आँतों को व्यर्थ का परिश्रम न करने के कारण पाचन-क्रिया ठीक रहेगी। भोजन जितना ही अधिक चबाया हुआ रहता है उसमें अधिक लार मिश्रण होने के कारण उससे बिना चबाये हुए भोजन की अपेक्षा कई गुना मात्रा में अधिक पोषण प्राप्त होता है। इस कारण ऐसा समझना भ्रम मात्र है कि अधिक खाने से अधिक पोषण प्राप्त होता है। बल्कि सत्य यह है कि अधिक अच्छी तरह पचे हुए भोजन से उत्तम पोषण प्राप्त होता है। चाहे भोजन की मात्रा कम ही क्यों न हो। एक बात और है। अच्छी तरह न चबा कर निगलने के कारण एक प्रकार की झूठी भूख लग आती है। उस अध्यशन (झूठी भूख में फिर भोजन करने) का परिणाम भयावह होता है। आँतों में सड़ा हुआ अंश जमा होता जाता है जिससे विविध प्रकार के कीटाणु जैसे टायफ़ाएड, पेचिश आदि फैलते हैं और शरीर का नाश कर देते हैं।

विटामिन सी और कैलशियम किन चीज़ों से प्राप्त हो सकते हैं इसकी जानकारी के लिए देखिए हमारी पुस्तकें 'हमारा भोजन' और "जीवन तत्व"।

मुख-रोग और दन्तरोग में पथ्यापथ्य

मंजन या दातौन से दाँतों को साफ़ करना, गरम जल से कुल्ली करना, जव, गेहूँ, मूँग, कुलथी, जङ्गली जानवरों का मांस, करेला, परवल, कच्ची मूली, कपूर, कपूर का पानी, कत्था, घी, थोड़ी मात्रा में पान, ये चीज़ें सभी प्रकार के मुखरोग में लाभ-दायक हैं। यदि मुख में घाव हो गये हों तो दातौन न करना चाहिए। रूखे पदार्थ, शीतल जल, गुड़, दही, दूध आदि मुख-रोग में हानि पहुँचाते हैं। मुख के रोगी को दिन में कभी नहीं सोना चाहिए।

जिनके मसूड़े बादी हों, सूज जाते हों और खून देते हों उन-को निम्न चीज़ें कम खानी चाहिए या बिलकुल न खानी चाहिए क्योंकि इनमें विटामिन का अभाव रहता है।

सूखा चना, सेम, दाल, सूखी मटर, शक्कर, पतला गोश्त, अण्डे, सोए, मैदा, मक्का, बाजरा, शहद, सूखे फल आदि।

मसूड़े के रोगियों को ये चीज़ें लाभप्रद होंगी—करमकल्ला, पालक, कल्ले फूटी हुई दालें, जैसे चना, मटर, मूँग आदि। इनको १२ घण्टे भिगोकर निकाल लेना चाहिए। फिर किसी तर कपड़े में बाँध कर हवा में रखने से कल्ले (अंकुर) फूट जाते हैं। टोमैटो, गाजर, शलजम के पत्ते, लोभिया, आलू, शरीफ़ा, शकरकंद, नींबू, नारङ्गी, आदि—क्योंकि इनमें विटामिन बी और सी अधिक होते हैं और ये विटामिन इस रोग में लाभदायक है।

९—आहार और मन्दाग्नि

(Diet and Dyspepsia)

समा समाग्नेरशिता मात्रा सम्यग्विपच्यते ।
स्वल्पापि नैव मन्दाग्नेः............ ।

आयुर्वेद में लिखा है कि उचित मात्रा में खाया हुआ भोजन उचित समय में अच्छी तरह पच जाय तो वह समाग्नि कही जाती है किन्तु मन्दाग्नि में थोड़ी मात्रा में खाया हुआ अन्न भी नहीं पचता। यही मन्दाग्नि की परिभाषा है।

मन्दाग्नि के बहुत से कारण हैं जिनमें परिश्रम का अभाव खास कारण है। आज-कल बाबुओं को जो काम करना या किसी प्रकार का परिश्रम करना अपनी शान के खिलाफ समझते हैं, यह व्याधि अधिक होती है। आज-कल भारत वर्ष में ६० प्रतिशत पढ़े लिखे लोगों में यह व्याधि पाई जाती है। इसका कारण यही है कि इनका जीवन अनियमित रहता है, ये दफ्तर के काम से इतने अधिक लदे रहते हैं कि स्वास्थ्य-सुधार के लिए कुछ कर ही नहीं सकते। प्रातः काल ये थोड़ी दूर टहलने के लिए भी नहीं जा सकते। इनको अपने जीवन को ठीक रखने का न तो शौक है न फुरसत। हाँ, एक काम ये करते हैं, डाक्टरों की शीशियाँ खाली करते जाते हैं। इसमें ऐसे लोगों को कोई कठिनाई नहीं पड़ती।

अतीसार, संग्रहणी, आम पेचिश, भूख का न लगना, खाया हुआ अन्न ठीक तरह न पचना, पाखाना न होना, तबीयत सुस्त रहना, जी में ग्लानि उत्पन्न होना, भोजन अच्छा न लगना—ये सब लक्षण मन्दाग्नि के हैं। यदि अग्नि ठीक रहे, उचित

मात्रा में भोजन किया जाय तो कोई कारण नहीं कि ये व्याधियाँ हो सकें। आयुर्वेद में लिखा है—

सर्वेषामेव रोगाणां निदानं कुपिता मलाः।
तत्प्रकोपस्य तु प्रोक्तं विविधा हित सेवनम्।

अर्थात्—सभी रोगों के उत्पन्न होने के कारण वात पित्त और कफ का कुपित होना है। ये दोष अनेक प्रकार के अहित सेवन करने से कुपित होते हैं। इसका अभिप्राय यह है कि यदि मनुष्य अपने आहार विहार को ठीक रखे तो उसके रोगी होने की कोई आशंका नहीं है।

अत्यन्त भारी, अत्यन्त चिकने, रूक्ष, उष्ण, अत्यन्त स्थूल आहार करने से, बिना भूख लगे ही खाने से, एक बार का खाया हुआ अन्न पचा न हो और फिर खा लेने से, एक बार खा लेने के थोड़ी देर बाद फिर खा लेने से, कभी दो पहर को, कभी शाम को, कभी प्रातः काल खाने से पाचन क्रिया में गड़बड़ी पड़ती है, और अन्न ठीक तरह नहीं पचता अकसर दस्त होने लगते हैं। इस विषय में पाश्चात्य डाक्टरों की भी यही राय है। डाक्टर सेसिल वेब जानसन ने लिखा है—

मन्दाग्नि या अजीर्ण ऐसे रोग हैं जो आहार को ठीक करने से ही दूर हो सकते हैं क्योंकि सिद्धान्ततः यह रोग खाने की गलती से ही होता है। ये गलतियाँ कई तरह की हो सकती हैं। यथा—भोजन बिना ठीक तरह से चबाये हुए यों ही निगल जाना, भोजन के समय गरम पानी आदि का अत्यधिक मात्रा में सेवन करना, मात्रा से अधिक खाना, थोड़ी-थोड़ी देर पर खाना, भोजन के अन्दर आवश्यक तत्वों का उचित मात्रा में न होना। बहुत से कारणों में से ये थोड़े से कारण हैं जिससे मन्दाग्नि या अपच हुआ करता है।

जब मनुष्य की तन्दुरुस्ती ठीक रहती है तब तो इस बात

पर ध्यान नहीं दिया जाता कि उसके भोजन में कौन-कौन से तत्व हैं। उस समय वह भारी चीजें जैसे उरद, सुअर का गोश्त, झींगा आदि भी खा कर पचा जाता है, ये हानिकर चीजें भी उसे हानि नहीं पहुँचातीं। किन्तु जब खाने की गलतियाँ बराबर होती जाती हैं, और पेट कमजोर हो जाता है जिससे मन्दाग्नि जैसी भीषण व्याधियाँ घर लेती हैं तब तो भोजन में सुधार करना आवश्यक हो जाता है, भारी चीजों का त्याग करना पड़ता है जिससे बिगड़े हुए अङ्ग ठीक होकर फिर काम करने लगें।

मन्दाग्नि में अग्नि मन्द हो जाती है, खाया हुआ अन्न पचता नहीं, पेट के यंत्र ढीले हो जाते हैं, वे ठीक काम नहीं कर पाते। इस रोग में ऐसी चीजें खानी चाहिए जो पचने में हलकी हों। भारी चीजें कतई बन्द कर दी जानी चाहिए। मांसाहारी लोगों को विशेष सावधान होने की जरूरत है, मांस का स्वभाव ही कब्ज करने का होता है। मन्दाग्नि में पाचक रस कम और कमजोर बनता है। वह मांस को पचाने में समर्थ नहीं होता। चरबी में भुनी हुई मछली, सुअर आदि का मांस, लड्डू पूरी आदि गरिष्ठ पदार्थ, उरद और उससे बनी चीजें अवश्य ही न खानी चाहिए। गोभी, शलगम (Turnips), चुकन्दर आदि शाकों में रेशे होते हैं और पचते नहीं, इस कारण ये शाक भी नहीं खाना चाहिए। भिण्डी की भी यही दशा है। हमने देखा है कि मन्दाग्नि वाले मनुष्यों को भिण्डी खाने से पेट में दर्द हो है, जाता सेम, मसूर, मटर, उरद आदि की दाल से पेट में गुड़-गुड़ाहट और वायु पैदा हो जाती है, क्योंकि ये चीजें भारी होती हैं और ठीक तरह न पचने के कारण वे सड़ने लगती हैं और एक प्रकार की गैस बनने लगती है। सरसों, राई, मिर्चा, सिरका आदि भी हानिकर पदार्थ हैं। अतः इनकी मात्रा कम करनी चाहिए।

जिनकी आदत अधिक चटपटी चीजें खाने की होती है वे मसालों के स्वाद से अधिक खा जाते हैं, इस अर्थ में मसाले से हानि होती है, किन्तु स्वभावत: मसाला बुरी चीज नहीं है। यदि इसका थोड़ा इस्तेमाल किया जाय तो भोजन स्वादिष्ट बन जाता है' खाने में रुचि उत्पन्न होती है, भोजन ठीक तरह से पचता है। जो लोग मसाले को अहितकर सिद्ध करते हैं उनसे हम सर्वथा सहमत नहीं हैं। हाँ अधिक मसाला खाने से अवश्य हानि हो होती है। आयुर्वेदिक नुसखे में हिंग्वाष्टक चूर्ण बहुत प्रसिद्ध नुसखा है। उसमें सोंठ, पीपरि,मिर्च, जवाइन, सेंधा नमक, जीरा सफेद और जीरा स्याह ये चीजें समान भाग और हींग एक चीज का आठवाँ भाग पड़ती है। इसी को हिंग्वष्टक चूर्ण कहते हैं। इससे पेट का दर्द दूर होता है, भूख बढ़ती है, खाने में रुचि होती है, भोजन स्वादिष्ट लगता है। इस चूर्ण की सभी दवाइयाँ मसाला ही हैं। जब चूर्ण से लाभ होता है तब उचित मात्रा में मसाले से कैसे नुकसान पहुँच सकता है! इसी प्रकार पेट के रोगों में प्राय: मसाले में पड़ने वाली चीजें डाल कर बहुत सी औषधियाँ बनाई जाती हैं और वे हानिप्रद न हो कर लाभप्रद होती हैं।

ऊपर जिन चीजों को न खाने की सलाह दी गई है उनको पढ़ कर किसी को निराश न होना चाहिए। जो मन्दाग्नि के रोगी मांसाहारी हैं और बिना मांस खाये नहीं रह सकते प्रकृति ने उनके लिए भी प्रबन्ध किया है। वैसे ही शाक सब्जी भी ऐसे रोगी को दी जा सकती हैं।

पश्चिमीय देशों में मांस बहुत खाया जाता है, वहाँ प्राय: सभी मांस खाये जाते हैं, इस कारण वहाँ के डाक्टर बकरी का मांस (Mutton), हिरन का मांस (Venison) चिड़िये का बच्चा (Chiken), पेरू (Turkey) मन्दाग्नि वाले को खाने लायक बतलाते हैं। जल के पक्षी, और जंगली बतख का मांस

भारी होता है, इस कारण इन्हें न खाना चाहिए। खरगोश का मांस हलका और अग्नि-दीपक होता है इस कारण खाया जा सकता है।

मन्दाग्नि में वे ही पदार्थ खाने चाहिए जो हलके हों, जल्द पच जायँ।

गेहूँ का आटा	दो घंटे में पचता है।
मक्का	दो घंटे में पचता है।
चावल	दो घंटे में पचता है।
जई का आटा	डेढ़ घंटे में पचता है।
अरारोट	१० मिनट में पचता है।

हमारे विचार से पुराने चावल और मूँग की पतली खिचड़ी हलकी होती है, और प्राय: सब लोगों को पच जाती है, यदि यह भी न पचे तो अरारोट का आटा खाना अच्छा है, सभी तरह के कच्चे फल जैसे अमरूद, नाशपाती, मूली, सिलेरी (Celery), लेट्यूस (Letuce), टोमैटो (Tomato) आदि दिक्कत से पचते हैं और कड़े होते हैं इस कारण इनसे परहेज करना चाहिए। हाँ, नारङ्गी का रस ख़ूब लिया जा सकता है, पानी में नीबू का रस डाल कर पीना भी लाभदायक है। मन्दाग्नि के रोगी को जिस प्रकार भोजन की ओर से सावधान रहने की आवश्यकता है उसी प्रकार पेय पदार्थों की ओर भी विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। भोजन के साथ जल पीने से भोजन ठीक नहीं पचता। अधिक जल पीने से भी भोजन ठीक नहीं पचता। आयुर्वेद में लिखा है—

अत्यम्बु पानाद्विषमाशनाच्च संधारणात्स्वप्नविपर्ययाच्च।
कालेपि सात्म्यं लघु चापि भुक्तमन्नं न पाकं भजते नरस्य॥

अर्थात् अत्यन्त जल पीने से, विषम भोजन करने से, पाखाना पेशाब को रोकने से और स्वप्न विपर्यय अर्थात् दिन को सोने,

रात को जागने से समय और पर खाया हुआ सात्म्य भोजन भी नहीं पचता।

भोजन के एक घंटा बाद जल पीना अच्छा होता है। डाक्टर सेसिल वेब जानसन ने (Dr. Cecil Webb Johnson) लिखा है—

भोजन के साथ जल पीना अच्छा नहीं है। किन्तु भोजन करने के आध घंटे पहले एक गिलास गरम जल पी लेने से लाभ होता है।

खीरा, ककड़ी, टमाटर आदि का रस निकाल कर पीना अच्छा है। खास कर टमाटर का रस मन्दाग्नि में लाभदायक है।

भोजन के साथ चाय काफी पीने की आदत बुरी है। इसका कसैलापन (Tannin) पाचन-क्रिया को बिगाड़ने वाला है। जिन का पेट कमजोर है उनके लिए तो यह शत्रु के समान है। जो लोग चाय के बहुत ही आदी हैं, बिना इसके किसी तरह रह ही नहीं सकते, वे भोजन के ३-४ घंटे बाद हलकी चाय पी सकते हैं। चाय के विषय में डाक्टरों का विचार है कि हिन्दुस्तान की चाय से चीन की चाय अच्छी होती है। शराब से पेट की बहुत सी व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं। इस कारण इससे बचना चाहिए।

भोजन के बाद सिगरेट या तम्बाकू पीने से भी मन्दाग्नि होती है। डाक्टर सेसिल वेब जानसन (Cecil Webb Johnson) ने लिखा है—

परीक्षण से ज्ञात हुआ है कि तम्बाकू दुस्साध्य अजीर्ण उत्पन्न करनेवाला है। आयुर्वेद के निर्माण के समय सम्भवतः तम्बाकू का प्रचार भारत में नहीं था। इस कारण प्राचीन ग्रन्थों में इसका उल्लेख हमें नहीं मिला। हाँ, बाद के ग्रन्थों में इसके गुणों का विवेचन मिलता है। वह इस प्रकार है—

वातानुलोमन करं वस्ति शोधनमुत्तमम् ।
दन्त रुक् शमनं चैव क्रिमि कण्ड्वादि नाशनम् ।
मद पित्त भ्रम करं वमन रेचनं स्मृतम् ।
दृष्टि मान्द्य करं चैव तीक्ष्णं शुक्रहरं तथा ।
तस्यैव धूम पानं तु विशेषाद्धृदि शुक्रहृत् ।

अर्थात् तंबाकू वात को अनुलोपन करनेवाला और वस्ति को शुद्ध करने वाला है । दाँतों की पीड़ा क्रिमि और खजुली आदि को नाश करता है । नशा, पित्त और भ्रम उत्पन्न करता है, वमन लाता है और पाखाना खोल कर लाता है, तेज होता है, आँख की रोशनी कम करता है, तीक्ष्ण और वीर्य नष्ट करने वाला है । इसका धुआँ हृदय को हानिकर और शुक्र को हरने वाला है । अभिनव निघन्टुकार ने लिखा है कि तम्बाकू विष है । इस कारण से तम्बाकू पीने वालों को विशेष सावधान होना चाहिए ।

शाक तरकारी के लिए थोड़ा आलू, परवल, नेनुआ, मूली, पालक, थोड़ा बथुआ, थोड़ा लहसुन, प्याज, मेथी, मँगरैला, जीरा हींग आदि डाल कर खाना चाहिए ।

हमारे शास्त्रों में केवल दो बार खाने की आज्ञा है; एक बार दिन को और दूसरी बार रात को । बीच में कुछ भी खाने की जरूरत नहीं बतलाई गई है । किन्तु आधुनिक सभ्यता के चक्कर में पड़कर अब हम लोग भी अपनी पुरानी परिपाटी को भूल रहे हैं और नाश्ता और जलपान आदि कई बार करने लग गये हैं । इसका फल यह हुआ कि मन्दाग्नि ने धर दबाया । अपना स्वास्थ्य ठीक रखने के लिए हमें अपनी पुरानी परिपाटी पर कायम रहने की जरूरत है । जिन लोगों को अधिक शारीरिक परिश्रम करना पड़ता है, जैसे किसान आदि, वे अपनी आवश्यकतानुसार थोड़ा सा जलपान बीच में भी कर सकते हैं । किन्तु जिनका हाजमा कमजोर है वे केवल दो बार ही पथ्य से भोजन

करें तो वे विशेष लाभ उठा सकते हैं। भोजन को पचने में साधारणतया सात घंटे लगते हैं। इस कारण एक बार भोजन कर लेने पर कम से कम सात घंटे तक कुछ भी खाने की जरूरत नहीं है। डाक्टर सेसिल वेब जानसन ने लिखा है--

गम्भीर (solid) भोजन सात घंटे में पचता है और हलका भोजन, जैसे नाश्ता आदि साढ़े चार घन्टे में पचता है। इन दोनों बातों को ध्यान में रखकर विचार करने से यह आसानी से समझ में आ सकता है कि हम लोगों की थोड़ी-थोड़ी देर पर खाने की आदत पाचन-प्रणाली के लिए घातक है, और उन पर ऐसा दबाव डालती है कि पाचक अंग कमजोर हो जाते हैं और काम करना छोड़ देते हैं।

उक्त डाक्टर की राय निष्पक्ष है। इसमें किसी को भी कोई सन्देह नहीं हो सकता। अतः पाचक यन्त्र को ठीक रखने के लिए हमें अपनी पुरानी पद्धति को ही काम में लाने की आवश्यकता है।

जितनी आवश्यकता इन सब बातों पर ध्यान देने की है उतनी ही आवश्यकता भोजन के कुचल कर निगलने की है। जिनके दाँत ठीक काम न करते हों उन्हें दन्तवैद्यों से नकली दाँत बनवा लेना चाहिए, किन्तु जिनको कुचल कर खाने कि आदत नहीं है उन्हें अपनी आदत में परिवर्तन करने की आवश्यकता है। भोजन को खूब अच्छी तरह चबा कर निगलना चाहिए जिसमें अन्न को पीसने के लिए आँतों को परिश्रम न करना पड़े।

भोजन साफ, देखने में अच्छा और रुचिकर होना चाहिए। जो भोजन खानेवाले को पसन्द न हो वह पथ्य होते हुए भी अपथ्य है। भोजन का स्थान साफ सुथरा होना चाहिए। भोजन ऐसे ढङ्ग से परोसा जाना चाहिए कि देखते ही उसे खाने की रुचि

उत्पन्न हो। भोजन करते समय चित्त एकाग्र रहना चाहिए। आयुर्वेद में लिखा है—

मात्रयाऽप्यभ्यवहृतं पथ्यं चान्नं न जीर्यति।
चिन्ता शोक भय क्रोध दुःख शैया प्रजागरैः॥

अर्थात् चिन्ता शोक, भय, क्रोध, दुख और दुखदाई शैया तथा जागने आदि से मात्रा में खाया हुआ पथ्य अन्न भी नहीं पचता।

भोजन करके फौरन काम में जुट जाना भी अच्छा नहीं है। खाना खाने के बाद कम से कम आध घन्टे तक शारीरिक या मानसिक कोई काम नहीं करना चाहिए। भोजन करके थोड़ी देर शान्ति के साथ विश्राम करना आवश्यक है। जो लोग काम में हर्ज होने के डर से भोजन करने के बाद तुरन्त ही काम में जुट जाते हैं वे ही मन्दाग्नि के शिकार होते हैं।

जिस प्रकार अधिक खाने से मनुष्य रोगी होता है उसी प्रकार कम खाने से भी कमजोरी बढ़ती है। इस कारण खाना ख़ूब सावधानी से उचित मात्रा में खाना चाहिए। भोजन के बाद थोड़ा सा लवण भास्कर चूर्ण खा लेने से खाया हुआ भोजन ठीक पच जाता है।

१०—आहार और रक्ताल्पता

(Diet and Anaemia)

रक्तं सर्वं शरीरस्थं जीवस्याधार मुत्तमम् ।
स्निग्धं गुरु चलंस्वादु विदग्धं पित्तवद् भवेद् ॥

रक्त सारे शरीर में विद्यमान रहता है और यह जीवन का उत्तम आधार है। अर्थात् इसी के ऊपर जीवन अवलम्बित है। यह चिकना, गुरु, चल और स्वादु (अच्छे स्वाद वाला) होता है। जब यह बिगड़ता है तब पित्त के समान लक्षणवाला हो जाता है तथा पित्त वाले रोग उत्पन्न करता है। हम जो कुछ भोजन करते हैं उसका पाक होने पर रस बनता है, इसी रस से दूध बनता है, और यही रस नाड़ियों द्वारा यकृत में जाता है और वहाँ रंजकपित्त द्वारा रँगा और पकाया जाकर रक्त बनता है।

ऊपर लिखा जा चुका है, कि रक्त सब शरीर में विद्यमान रहता है, किन्तु पुराने आचार्यों ने यकृत और प्लीहा को इसका मुख्य स्थान माना है। यहीं से सारा रक्त शरीर के पोषण के लिए प्रथम फुप्फुस और वहाँ से सारे शरीर में भेजा जाता है। एक प्रकार से प्राणि मात्र का शरीर रस से ही बना हुआ समझना चाहिए। जब तक भोजन में शरीर के पोषण करनेवाले समूचे तत्व न विद्यमान रहेंगे तब तक शरीर को पूर्ण रूप से पोषण करनेवाला रस बन ही नहीं सकता।

आयुर्वेदीय सिद्धान्तानुसार पंच भूतात्मक (पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश इन पाँच तत्वों के गुण वाले), चतुर्विध (भक्ष्य, भोज्य, लेह्य, पेय), षटरस (मधुर, अम्ल, लवण, कटु, तिक्त, कषाय रस वाले) द्विविध वीर्य (शीत और उष्ण वीर्य

वाले) तथा अष्ट विधि वीर्य (रस, आदि आठों प्रकार के वीर्य वाले) तथा अनेक गुणों वाले भोजन ग्रहण करना चाहिए। और पाश्चात्य मतानुसार प्रोटीन, कार्बो-हाइड्रेट, (Carbohydrate) वसा, खाद्योज (Vitamins) जल और खनिज लवण का उचित परिमाण में रहना आवश्यक है।

यदि भोजन केवल पेट भरने के लिए किया जाय और उसमें आवश्यक तत्व आवश्यकता से कम हों या न हों तो क्या उससे बना हुआ रक्त शरीर पोषण करने में समर्थ होगा ?

शुद्ध रस बीरबहूटी के रङ्ग का—शुद्ध लाल रङ्ग का—होता है, न बहुत गाढ़ा होता है, और न बहुत पतला होता है। रक्त को पुराने आचार्य पंच भूतात्मक मानते हैं अर्थात् उसमें गाढ़ापन पृथ्वी का गुण है, तरलता जल का, सुरखी अग्नि का, चलना वायु का, और लघुता (हलकापन) आकाश का गुण बतलाते हैं। इसी रक्त से क्रमशः मांस, मेद, अस्थि, मज्जा और शुक्र बनता है और स्त्रियों को शुक्र के स्थान में आर्तव बनता है।

रक्त के कम होने से धीरे-धीरे सभी धातुएँ कम होने लगती हैं, त्वचा में खुरदरापन, और खटाई तथा शीतल पदार्थों के खाने की रुचि विशेष होती है। बढ़े हुए रक्त से शरीर और नेत्रों में सुरखी रहती है, नसें भरी हुई रहती हैं।

हमारे रक्त में रक्तकण के कम होने से ही रक्त-हीनता होती है। स्कूल में पढ़नेवाली लड़कियों को—जिनको पढ़ने लिखने में अधिक परिश्रम करना पड़ता है—यह व्याधि उत्पन्न होती है। डाक्टरों ने रक्त-हीनता का कारण अधिक परिश्रम, अधिक अध्ययन और चिन्ता माना है। लिखा है—

अधिक श्रम आदि से वायु कुपित होता है और उसी के बिगड़ने से सारे फ़साद उत्पन्न होते हैं। सुश्रुत ने लिखा है।

"वात-वर्द्धक आहार अधिक सेवन करने से, परिश्रम (दुस्ह

कसरत अथवा शारीरिक और मानसिक तथा अन्य परिश्रम) अधिक करने से, अधिक मैथुन से, पढ़ने का परिश्रम करने से, भय से, शोक से, रात को जागने से, प्यासा और भूखा रहने से, कसैला और थोड़ा भोजन करने से रसधातु स्वल्प हो जाती है, और अन्य धातुओं की तृप्ति नहीं होती और मनुष्य दुबला हो जाता है, और उसे कालान्तर में श्वास, खाँसी, राजयक्ष्मा, प्लीहा, उदर रोग, जठराग्नि की निर्बलता आदि रोग होते हैं। यदि रोग का प्रतीकार न किया जाय तो मृत्यु हो जाती है।"

शरीर के वर्द्धन काल में उसे अधिक पोषण प्राप्त होने की आवश्यकता है। इस विषय में प्रोफेसर ऐटवाटर (Professor Atwater) ने कहा है—

चौदह से सोलह वर्ष तक की लड़की को साधारण काम करनेवाले एक पूर्ण युवा पुरुष की खुराक के $\frac{9}{10}$ भाग की आवश्यकता पड़ती है। एक और डाक्टर की राय इस प्रकार है—

चौदह पन्द्रह वर्ष की लड़की को उतनी ही कर्बोज की आवश्यकता है जितनी की युवा पुरुष को और उसके तीन चौथाई प्रोटीन (मांस बनानेवाले तत्व की जरूरत है।

इसी प्रकार वर्द्धन काल में लड़कों को भी भोजन मिलना चाहिए। यदि पूर्ण पोषण न मिलेगा तो शरीर का वर्द्धन ठीक न होगा और निःरक्तता की व्याधि अवश्य पीछा पकड़ लेगी।

निःरक्तता भोजन में सुधार करने से ही दूर हो सकती है और गालों पर अरुणिमा की आभा कायम रखी जा सकती है। इस रोग के लिए लोहे वाले भोजन आवश्यक हैं क्योंकि इसका सीधा प्रभाव रक्त पर पड़ता है। यह तत्व हरी तरकारियों और सलाड, में अधिक पाये जाते हैं। मांस में भी यह सब से अधिक पाया जाता है। सबसे अधिक बढ़िया तरकारियाँ हैं—पात गोभी, ब्रुसेल्सस्प्राउटस (Brussels sprouts), सीकेल (Seakale),

फूल गोभी, और पालकी, इनमें आवश्यक नमक रहते हैं। प्याज और एस्पेरेगस (Asparagus) भी लाभदायक हैं। प्याज का रस और शहद रक्त बढ़ाने में बड़ा काम करते हैं, कमजोरी दूर हो जाती है। तरकारियाँ भाप से पकाकर खानी चाहिए, उन्हें तेज आँच पर उबालना न चाहिए; क्योंकि पानी मिलाने से नमक पानी में घुल जाता और नीचे बैठ जाता है। आलू में अधिक नमक रहता है, उसमें क्लोराइड आफ पोटैशियम, लौह, मैगनैशिया और चूना के तत्व पाये जाते हैं। उसमें श्वेतसार (Starch) भी अधिक होता है, इसी कारण आलू एक आवश्यक भोजन है। लेकिन इसका छिलका निकाल कर बनाने से इसका तत्व नष्ट हो जाता है। लिट्यूस (Lettuce) इनडाइव (Endive), क्रेस (Cress) और टोमेटो (Tomatoes) मजे में सेवन किये जा सकते हैं, लिट्यूस में खनिज नमक का अंश अधिक होता है। डाक्टर सेसिलवेब जानसन (Dr. Cecil Webb Johnson) ने लिखा है—

अधिक जैतून का तेल डालकर अच्छी तरह से बनाया हुआ सैलेड, बहुत अच्छे भोजनों में से एक है, सिरके का इस्तेमाल करनेवालों को उसके बदले थोड़ा सा नींबू का जूस लेना चाहिए सिरके का प्रभाव घातक पड़ता है। वह रक्तकणों को कम करता है। जो लड़कियाँ जीभ के स्वाद के लिए अधिक सिरका खाती हैं वे रक्ताल्पता का शिकार अधिक होंगी।

मिस्टर जर्मेन सी (M. Germain See) ने लिखा है—

मांस में रक्त को बढ़ाने और पुष्ट करने वाले सभी तत्व मौजूद हैं; इसमें ऊपर लिखे लौह आदि तत्व पूर्ण रूप से रहते हैं अतः ऐसा भोजन और खुली वायु जीवन के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं।

आयुर्वेद में मांस का साधारण गुण इस प्रकार लिखा है—

मांसं वातहरं सर्वं बृंहणं बल पुष्टि कृत् ।
प्रीणनं गुरु हृद्यं च मधुरं रस पाकयोः ॥

अर्थात् सभी तरह के मांस बृंहण (Nourishing) बलवर्द्धक और पुष्टिकारक हैं। स्वादिष्ट, गुरु, हृदय को रुचने वाले हैं और पाक और रस में मधुर हैं। बृंहण होने के कारण रक्तात्पता के लिए यह विशेष उपयोगी हैं। यक्ष्मा चिकित्सा में महर्षि चरक कहा है—

शुष्यते क्षीण मांसाय, कल्पितानि विधानवित् ।

....

दद्यात् मांसाद मांसानि बृंहणानि विशेषतः
मांसेनोपचितांगानाम् मांसं मांसकरं परम् ।
तीक्ष्णोष्णो लघुवांच्छुस्तं विशेषान्मृग पक्षिणाम् ॥

अर्थात् जो क्षीण-मांस हो गया हो, उसको मांस खाने वाले पशुओं का मांस अनेक तरह से बना कर देना चाहिए क्योंकि वह विशेष बृंहण होता है।......मांस से पुष्ट हुए मांसाहारी जीवों का मांस मांस बढ़ाने वाला है। तीक्ष्ण और उष्ण होने के कारण शोष में मृग और पक्षियों का मांस अत्यन्त हितकर होता है।

ऊपर के उद्धरणों से मांस का थोड़ा सा गुण ध्यान में आता और ज्ञात होता है कि यह मांस बढ़ाने वाले सभी तत्वों से पूर्ण है। अतः वर्द्धन काल में इसका सेवन आवश्यक है। जिनको और प्रकार का पोषण नहीं मिलता उनको मांस अवश्य मिलना चाहिए।

डाक्टर सेसिल वेब जनसन ने लिखा है मांस—विशेषतः यकृत और गुर्दे का मांस—रक्त को बढ़ाता है और भयानक रक्तात्पता को दूर करता है।

योरुप के एक सुप्रसिद्ध डाक्टर ने कहा है—

बहुत सी दशाओं में रक्तल्पता की व्याधि मांस के अभाव के परिणाम स्वरूप उत्पन्न होती है—अर्थात् लौह और रक्तकण बनाने वाले अन्य पदार्थ—जो मांस में मौजूद हैं—का अभाव उसका कारण है। इससे सिद्ध है कि वह रोग भोजन की उचित मात्रा से ही ठीक हो सकता है।

ऊपर पुराने ख्याल के डाक्टरों का मत दिया गया है जो लोग मांस से परहेज करते हों उनको मांस लेने की आवश्यता नहीं। च्यवनप्राश और दूध से रक्त बनता है पालक का रस रक्त बनाने में अद्भुत गुण रखता है। सन्तरा और दूध से भी रक्त बनता है। रक्त घढ़ाने के लिए दूध अत्यन्त आवश्यक पदार्थ है। दूध पचने के लिए सन्तरा या पालक का रस लेना आवश्यक है। यदि पाचन शक्ति ठीक हो तो फल दूध और शाक तरकारियों के यथेष्ठ उपयोग से रक्तालपता दूर होती है। मांस में सड़ने का गुण है इस कारण हमेशा ताजे मांस ही खाने लायक होता है। योरप के प्राकृतिक चिकित्सक ताजे मांस को बुरा नहीं समझते। हमारी निजी राय यह है कि जिन लोगों को मांस से परहेज हो उनका काम बिना मांस खाये भी चल सकता है। बकरी का घी, फल शाक तरकारियाँ दूध आदि ऐसी चीजें हैं कि ये शरीर में रक्त बढ़ा देती हैं।

लोहा रक्त बनाने वाले पदार्थों में उत्तम है। पाण्डु रोग भी रक्तकण के नाश होने से उत्पन्न होता है। उसमें भी लोहे की भस्म पड़ी हुई औषधियाँ दी जाती हैं। उसी प्रकार रक्तालपता में भी ऐसे पदार्थ जिन में लौह तत्व अधिक पाये जाते हों विशेष उपकारी होते हैं—यह तत्व मांस, शाक, तरकारी, फल आदि, जैसे आलू, जौ, चावल, ओट मील (Oat meal) और गेहूँ आदि में अधिक पाये जाते हैं।

मक्खन का गुण आयुर्वेद में इस प्रकार लिखा है—

संग्राही वात पित्तासृक्क्षयार्शोर्दित कासनुत।
तद्धितं बालके वृद्धे विशेषादमृतं शिशोः॥

अर्थात् यह संग्राही है, और वात पित्त, रक्त क्षय, बवासीर अर्दित वात और कास (खाँसी) को दूर करता है और बालकों और वृद्धों को हितकर है। बच्चों के लिए तो अमृत ही समझिए।

घृत का गुण इस प्रकार लिखा है—

स्निग्धं कफकरं रक्षोरक्त क्षय विसर्पनुत।"

अर्थात्—यह चिकना है, कफ को बढ़ाता है, वात को दूर करता है, भूत-बाधा मिटाता है और रक्त-क्षय तथा विसर्प को दूर करनेवाला है।

अतः शाकाहारियों को मक्खन और घी का प्रचुर प्रयोग करना चाहिए। मांसाहारी लोग मांस के साथ साथ इसका इस्तेमाल करके विशेष लाभ उठा सकते हैं।

ऊपर बताये गये भोजनों के ठीक मिश्रण से जिस प्रकार रक्ताल्पता की व्याधि रोकी जा सकती है उसी प्रकार ऐसे रोगी की दशा भी ठीक की जा सकती है ऐसे रोगी को पूर्ण आराम करना चाहिए। आठ दस घंटे रोज सोना चाहिए। आठ नौ बजे शाम को ही सो जाना अच्छा होता है। प्रातःकाल भी बहुत तड़के न उठना चाहिए। जिस कमरे में रोगी सोता हो उसकी सारी खिड़कियाँ और दरवाजे खुले रखने चाहिए। यह बिलकुल ठीक है कि ऐसे रोगी को आराम की अधिक आवश्यकता है, किन्तु थोड़ा सा व्यायाम करना, जिससे थकावट न मालूम हो आवश्यक है, साँस सदैव गहरी लेनी चाहिए जिससे प्राणपद वायु (Oxygen) अधिक मिल सके।

नाश्ता इस प्रकार दिया जा सकता है—

सूजी का हलवा, इसके साथ कोई मांस, मछली या अंडा,

शुद्ध घी या शुद्ध मक्खन के साथ रोटी, दूध, चाय पीनेवाले अधिक दूध डालकर थोड़ी चाय ले सकते हैं।

दोपहर का भोजन—चावल रोटी, ऊपर लिखी तरकारियों में से तरकारी, मृग या पक्षियों का मांस, मूँग या मसूर की दाल, घी, दूध और मक्खन। शाम को इसी प्रकार का भोजन दिया जा सकता है।

घी, अण्डे, क्रीम, ताजी तरकारी और फल खूब खाने को देना चाहिए। कब्ज से बचने के लिये फलों का व्यवहार आवश्यक है।

कभी-कभी रक्तालपता पेट के बिगड़ जाने से भी हो जाती है। इस कारण पाचन-शक्ति सदैव ठीक रखनी चाहिए। पाचन-क्रिया के बिगड़ने से भोजन का रस ठीक नहीं बनता और रक्ताल्पता की व्याधि धर दबाती है। पेट ठीक रखने के लिए लवण-भास्कर चूर्ण का इस्तेमाल करना चाहिए। उससे भोजन ठीक तरह से पचकर शुद्ध रस और रक्त उत्पन्न होता है।

कुछ लोगों की राय है कि भोजन के साथ नमक अधिक खाने से भी लाभ होता है। किन्तु सिरके से सदैव परहेज रखना चाहिए। भोजन के आध घन्टे बाद द्राक्षासव या द्राक्षारिष्ट का उचित मात्रा में सेवन लाभदायक होता है।

महर्षि सुश्रुत ने निम्न प्रकार का आहार विहार लाभदायक बताया है। लिखा है—

यदि कृशता और उसके रोग बढ़ जायँ तो क्षीर काकोली, असगन्ध, बिदारीकंद, शालपर्णी, शतावरि, बला, अति बला, नाग बला, गंगेरन, तथा अन्य मधुर और बृंहण औषधियों का उपयोग करे। दूध, दही, घी, मांस, शालि चावल, साठी चावल जौ, गेहूँ, इनका भोजन, दिन का सोना, ब्रह्मचर्य, परिश्रम, न करना तथा बृंहण बस्ति का उपयोग करना चाहिए।

११—आहार और मानसिक दुर्बलता

मस्तिष्क की दुर्बलता बहुधा स्त्रियों को हुआ करती है। पर कभी-कभी पुरुष भी पाचन-क्रिया में बिकार होने से इसके शिकार होते हैं। इसी को यों भी कह सकते हैं कि जिस मनुष्य का आहार समुचित है, उसको अव्यवस्थित भोजन करनेवालों की अपेक्षा मानसिक दुर्बलता होने की बहुत ही कम आशंका रहती है। इस व्याधि के कारणों में से एक कारण यह भी है कि हमारे यहाँ की महिलायें उपवास अधिक किया करती हैं। यों तो उपवास अच्छी चीज है किन्तु सबके लिए नहीं। मेद-रोग से ग्रस्त लोगों को, या जो इतना अधिक भोजन करते हों कि बिना उपवास के काम ही न चले उन्हीं को उपवास से लाभ हो सकता है। जिनके शरीर को भोजन की आवश्यकता है या जो दुर्बल हैं वे उपवास से कैसे लाभ उठा सकते हैं। हमारे देश में इतने उपवास प्रचलित हो गये हैं कि उनसे बहुधा हानि ही होती है। किन्तु धर्म-भीरु महिलायें बिना कुछ सोचे समझे पुरानी लकीर की फकीर बनी हुई हैं, बुद्धि बल से काम ही नहीं लेतीं। हमने देखा है कि बीमारी से उठी हुई महिलायें भी जिनको भोजन की अधिक आवश्यकता रहती है, उपवास करती हैं। क्या ऐसा उपवास लाभ-प्रद हो सकता है। निस्संन्देह ऐसे लोगों को मानसिक दुर्बलता की व्याधि हो जाती है, क्योंकि मानसिक बल बढ़ने के लिए भोजन और पाचन-क्रिया को आराम, दोनों की आवश्यकता होती है। अनावश्यक उपवास करने से वात की वृद्धि होती है, वात-वृद्धि ही मानसिक दौर्बल्य का प्रधान कारण है। नींद का न आना मस्तिष्क की व्याधि होने का

सूचक है। जल्दी-जल्दी भोजन कर लेने से भी अच्छी निद्रा नहीं आती क्योंकि आमाशय को आराम नहीं मिलता इससे भी कभी-कभी यह व्याधि घर कर लेती है।

चाय, काफी, तम्बाकू, अलकोहल (शराब) और ऐसे ही उत्तेजक पदार्थ भी अव्यवस्थित मस्तिष्क के कारण होते हैं। चिन्ता, थकान और शक्ति से अधिक परिश्रम करना ये तीन बातें भी इस रोग के प्रधान कारणों में से हैं। फिर भी यह दृढ़ता से कहा जा सकता है कि जो अपना भोजन विवेकपूर्वक करते हैं वे इन शत्रुओं के आक्रमणों का सामना ऐसे लोगों की अपेक्षा अधिक अच्छी तरह कर सकते हैं जिनका भोजन अव्यवस्थित, तत्वहीन और विवेकहीन होता है। यदि कभी थकावट, अधिक परिश्रम और चिन्ता के कारण मस्तिष्क दुर्बल हो जाय तो तुरन्त ही आहार की जाँच करनी चाहिए और उसमें उन्नति करने की चिन्ता करनी चाहिए। थके हुए मस्तिष्क के लिए सब से अच्छा सहायक वस्तु घी मलाई आदि हैं, अतः वसामय पदार्थों का उपयोग सुखदायक हैं। यह आवश्यक तत्व मांस, मक्खन, मलाइ, अंडा, केकड़ा, झींगा और घोंघा (Oysters) इन चीजों में अधिक पाया जाता है। अपने सम्प्रदाय और धर्म के अनुसार इनका सेवन करना गुणकारी है। इस व्याधि से बचने के लिए भोजन के समय में नियमितता की भी अत्यन्त आवश्यकता है। साथ ही यह भी स्मरण रखना चाहिए कि जब भोजन करने की इच्छा हो तभी भोजन करना चाहिए। भोजन का समय आ जाने पर भी यदि भोजन की रुचि न हो तो भोजन न करना अधिक लाभदायक है। क्योंकि भोजन का एक समय टल जाने से भूख अच्छी लग जायगी और दूसरे समय का भोजन अधिक स्वादिष्ट लगेगा।

डाक्टर सेसिल वेब जानसन (Dr. Cecil Webb John-son) ने लिखा है—

यह बतलाया जा चुका है कि मतिष्कस्थैर्य में पुष्टिकारक भोजन जिसमें वसा की अधिकता हो, जैसे क्रीम, मक्खन, बेकन उत्तम है। कच्ची साग तरकारियों का खाना भी उत्तम है क्योंकि इससे पाचन शक्ति को सहायता मिलती है। मूली, सिलेरी और लिट्यूस प्रभृति चीजें भी उत्तम हैं। सलाद की पत्ती (Salad) भी लाभदायक है। जैतून का तेल जिसमें शाक तत्व और वसा दोनों होती है लाभदायक है।

हमारे देश में चाय और काफी का प्रचार बुरी तरह बढ़ रहा है। २०-२५ वर्ष पहले इस देश में कोई भी इन उत्तेजक वस्तुओं का रुचिया न था। ऐसी उत्तेजक वस्तुएँ मानसिक दुर्बलता में हानिप्रद होती हैं। चाय वातवर्धक होती है इस कारण उसका अधिक प्रयोग करने से वातशूल, अनिद्रा और शिर:शूल की व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं। शराब से भी बचना चाहिए। किसी प्रकार की उत्तेजक वस्तु इस रोग को बढ़ाने वाली होगी।

मस्तिष्क-स्थैर्य के रोगी को भोजन इस प्रकार दिया जा सकता है—

प्रातःकाल का जल-पान—मक्खन और रोटी, पीने के लिए नारियल का पानी। मांसाहारी अंडे खा सकते हैं।

दोपहर का भोजन—रोटी, दाल, करमकल्ला, फूल गोभी, पालक, मटर, सेम, प्याज आदि तरकारी और घी तथा कुछ फल। मांसाहारी पालतू चिड़ियों का गोश्त भी थोड़ा ले सकते हैं।

सायंकाल का भोजन—रोटी, मक्खन, तरकारियाँ, नारियल का पानी, सोते समय दूध मिश्री भी लिया जाना चाहिए। जहाँ तक सम्भव हो रात का भोजन ७ बजे शाम तक कर लेना अच्छा है।

अधिक परिश्रम करने या थकावट के कारण यदि चक्कर आता हो तो दवाइयों से काम न चलेगा एक समय दोपहर को

रोटी और कोई सादी उबली हुई सब्जी खाइये। शाम को आध पाव या तीन छटाँक किशमिश भिगो दीजिए वही खाइये और दूध पीजिये एक मास में नई शक्ति आ जायगी और रोग भी दूर हो जायगा।

मानसिक दुर्बलता और चक्कर आना यदि कुछ दिनों तक लगातार जारी रहें तो मृगी, उन्माद, अनिद्रा के रोग हो जाने की अधिक आशंका रहती है। इन रोगों का आपस में बड़ा गहरा सम्बन्ध है। कुछ विद्वानों की राय है कि मृगी (Epilepsy) बालकपन के भोजन में गड़बड़ी के करण उत्पन्न हो जाती है। मृगी रोग वाले का भोजन हल्का, सुपच और पौष्टिक होना चाहिए। रोटी, मक्खन, घी, ताजी तरकारी, फल, दूध आदि उत्तम आहार हैं। थोड़ा चावल, साबूदाना और मिश्री का इस्तेमाल रखना अच्छा है।

यदि मानसिक दौर्बल्य के साथ निद्रा-नाश का रोग उत्पन्न हो जाय तो यह बीमार के लिये बड़ी विपत्ति का सामना है। निद्रा-नाश के सम्बन्ध में डाक्टर सेसिल वेब जानसन (Dr. Cecil Webb Johnson) ने लिखा है—

अनिद्रा का रोग मस्तिष्क दौर्बल्य की अपेक्षा पाचन क्रिया में अव्यवस्था के कारण अधिक उत्पन्न होता है। इससे यह सिद्ध है कि यदि आहार ठीक रखा जाय, पाचन क्रिया ठीक रहे तो अनिद्रा का रोग होने की बहुत ही कम आशंका रहती है। यदि आमाशय ठीक नहीं काम करता तो नींद दुर्लभ हो जायगी। चाय, काफी और तम्बाकू भी निद्रा के शत्रु हैं।

ऐसा अकसर देखने में आता है कि जो लोग डट कर खा लेते हैं, पेट तन जाने के कारण उनको रात को शांत निद्रा नहीं आती। रात को नींद न आने से वायु की वृद्धि होती है और इसके कारण वायु के विकार जैसे जी का भारी होना, सिर का

दर्द, जम्हाई आना, काम में जी न लगना आदि रोग उत्पन्न हो जाते हैं। कुछ दिन यह शिकायत बनी रह जाय तो स्वास्थ्य चौपट हो जाता है। यह स्मरण रखना चाहिए कि एक रात को नींद न आने से जो क्षति होती है सम्भवतः उसकी पूर्ति जीवन में कभी नहीं होती। वायु की वृद्धि के कारण ही अकसर वृद्ध पुरुषों को रात को अच्छी नींद आती। यदि चिकनी, मीठी और हलकी चीजों का समझ के साथ उपयोग किया जाय और भोजन करने के समय का उचित ध्यान रखा जाय तो अनिद्रा का रोग मिट जाय।

१२—आहार और अनिद्रा

हृदयं चेतना स्थानमुक्तं सुश्रुत देहिनाम्।
तमोभिभूते तस्मिंस्तु निद्रा विशति देहिनाम्।
निद्रा हेतुस्तमः सत्व बोधने हेतुरुच्यते।
स्वभाव एव वा हेतुर्गरीयान परिकीर्तितः।

—सुश्रुत

सुश्रुत कहते हैं कि इस शरीर में चेतना स्थान हृदय है। उसके तमोगुण से ढँके जाने से नींद आती है। निद्रा का कारण तमोगुण और बोध (जाग्रत) अवस्था का कारण सतोगुण कहा जाता है अथवा दोनों का कारण स्वभाव ही है।

हमारे शरीर में जितनी क्रियायें स्वाभाविक होती हैं उनका उचित रीति से होते रहना स्वास्थ्य का हेतु है, स्वभाव में परिवर्तन होने से स्वास्थ्य ठीक नहीं रह सकता। दिन भर के कठिन परिश्रम के बाद रात को नींद आती है और सारे श्रम को हर कर हमारे शरीर में स्फूर्ति और ताज़गी भर देती है। दूसरे दिन काम करने की नवीन शक्ति हम में आ जाती है और नये उत्साह के साथ हम फिर अपने आवश्यक कामों में लग जाते हैं। नींद में कितनी संजीवनी शक्ति है इसको ठीक ठीक वही बता सकता है जिसे रात को ठीक नींद न आती हो।

जिस प्रकार रात को अच्छी नींद न आने से हमारा शरीर स्वस्थ नहीं रह सकता उसी प्रकार अधिक निद्रा आना भी स्वास्थ्य को नष्ट कर देता है। यदि मनुष्य रात को ही सोवे तो कोई हर्ज नहीं किन्तु लोग अक्सर दिन को भी सोया करते हैं

प्रायः रात को उन्हें अच्छी निद्रा नहीं आती। अतः रात को ठीक नींद न आने के कारणों में से दिन का सोना भी एक कारण है। दिन को सोने से त्रिदोष की वृद्धि होती है और जुकाम, खाँसी आदि व्याधियाँ पकड़ लेती हैं। शरीर का भारी रहना, अरुचि, ज्वर और मन्दाग्नि हो जाती है।

रात को जागने से वायु कुपित होता है अंगड़ाई आती है, सिर भारी हो जाता है, पित्त भी बिगड़ता है और इन दोनों के उपद्रव उत्पन्न होते हैं। इस कारण दिन को सोना और रात को जागना दोनों आदतें बुरी हैं और स्वास्थ्य को नष्ट करती हैं।

रात को नींद न आने के विषय में डाक्टर सेसिल वेब जानसेन (Dr. Cecil Webb Johnson) ने लिखा है—

भोजन में ग़लती होते ही अनिद्रा की व्याधि उत्पन्न होती है। जो लोग बुद्धि खो कर भोजन अधिक करते हैं उनकी पाचन क्रिया में गड़बड़ी होने से नींद नहीं आती। और रात को अधिक देर करके भोजन करना भी अनिद्रा का कारण होता है।

पेट की अव्यवस्था भी अच्छी निद्रा आने में व्याघात डालती है अतः भोजन का चुनाव सावधानी से करना चाहिए। बहुत ही कीमती और उत्तेजक भोजन पाचन क्रिया में अव्यवस्था उत्पन्न करते हैं। हंस (Goose) बतख, सुअर का मांस, तरह तरह की चटनियाँ सासेज (Sausage) केकड़ा और लाब्स्टर (Lobsters) दुष्पच होते हैं। जिनकी अग्नि मन्द हो गई हो वे मांस मछली, शोरबा और कच्ची मूली आदि भी नहीं हजम कर सकते। इन वस्तुओं के खाने से ऐसे लोगों के पेट में अव्यवस्था उत्पन्न होती है और नींद ठीक तरह नहीं आती।

अन्त्रानाह से रात को नींद नहीं आती। यह श्वेतसारीय (Starchy) पदार्थों के ठीक न पचने से होता है। ऐसी दशा

में कार्बोज मय पदार्थ (Carbohydrates) का एक दम परित्याग करना अच्छा है। मछली और मुर्गी (Chicken) का मांस अच्छा होता है। पालकी का शाक भी अच्छा होता है। जिनकी पाचन शक्ति अच्छी न हो उन्हें नये अन्न न खाना चाहिए। प्रत्येक प्रकार की मछली और मांस पाचन-शक्ति वाले को लाभदायक नहीं हैं। कुछ सफेद मछलियाँ जैसे सोल (Sole) प्लेस (Plaice), ब्रिल (Brill) टरबट (Turbot) ह्वीलिंग (Whiling), फ्लाउडर (Floundar) खाना हानि नहीं करती किन्तु अधिक तेल वाली मछलियाँ जैसे सालमन (Salmon), मैकरेल (Mackerel), ईल (Eel) हानिकारक होती हैं। पोर्क (Pork) और वील (Veel) अत्यन्त हानिकारी मांस है। मुर्गी (Chicken) और फीजैंट (Pheasant), खरगोश (Rabbit) का मांस हल्का होता है और खाने में हानिकार नहीं होता।

आलू, पालकी, फ्रेंच बीनस (french beans) हरी मटर अच्छे शाक समझे जाते हैं। पात गोभी, केला (Kala) ब्रुसल स्प्राउट (Brussels sprouts) सूत्रमय होते हैं अतः इन्हें मन्दाग्निवाले मनुष्य पचा नहीं सकते। इस कारण इनका व्यवहार न करना अच्छा है।

भोजन के साथ जल पीने से अकसर पाचन क्रिया में गड़बड़ी पड़ जाती है अतः ऐसी आदत डालनी चाहिए जिसमें भोजन के साथ जल पीने की जरूरत न पड़े। भोजन करते समय बीच बीच में एक आध घूंट जल पी लेना अच्छा होता है। भोजन करने के घंटे आध घंटे बाद एक गिलास इच्छानुसार जल पीना अच्छा होता है। इससे पाचन क्रिया में सहायता मिलती है।

वाग्भट्ट ने लिखा है—

समस्थूलं कृशं भुक्तं मध्यान्त प्रथमाम्बुपा

अर्थात भोजन के पहले जल पीने से मनुष्य दुबला होता है, बीच में पीने से समान रहता है और अन्त में पीने से मनुष्य मोटा होता है। यहाँ पर अन्त का अर्थ भोजन के घंटे आध घन्टे बाद समझना चाहिए। किन्तु जैसा ऊपर लिखा गया है यदि प्यास मालूम हो तो बीच में थोड़ा जल पी लेना हानिकर नहीं होता।

जब से हमारे देश में चाय का प्रचार बढ़ा है और लोगों ने उसको तेज करके पीना शुरू किया है तब से निद्रानाश की व्याधि अधिक बढ़ रही है। चाय तो यों ही बात बर्द्धक और निद्रा नाशक है किन्तु यदि उसको तेज बनाया जाय—उसे थोड़ी देर उबाल लिया जाय जिससे उसका जहरीला अंश भी पानी में घुल जाय तब तो उसे निद्रा का शत्रु और निद्रा-नाश का मित्र ही समझना चाहिए। एक बार स्वर्गीय नाथूराम शंकर शर्मा ने—जो एक पीयूष-पाणि वैद्य थे—चाय की तारीफ में लिखा था—"नींद को घटाती बवासीर को बढ़ाती है" जहाँ के लोग चाय अधिक पीते हैं और जो डंके के चोट से प्रचार करके हमारे यहाँ का धन लूट रहे हैं उसी देश के एक सहृदय डाक्टर की राय देखिये—

सब से निद्य भोजन तेज चाय है, जिसमें मांस मछली और बोटियाँ भिगोई जाती हैं। चाय के अन्दर एक दुगुण यह है कि उसके अन्दर का "टैनिन" नामक पदार्थ अलब्यूमिन तत्व को कठिन बना देता है। और उसको भोजन रूप में ग्रहण करने वाला पचा नहीं सकता जिस प्रकार कि जूते का तल्ला जैसी सख्त चीज नहीं पच सकती।

हमारे देश में धनी मानी लोग शराब पीते ही हैं। यही तो धन की शोभा समझी जाती है। सुरा देवी की आराधना में ही

त्रैलोक्य-सुख समझा जाता है, पाश्चात्य देशों में तो इसका इतना अधिक प्रचार है कि यह एक साधारण पेय पदार्थ समझा जाता है। निद्रा-नाश की व्याधि अकसर "बड़े लोगों" को ही हुआ करती है। वही लोग तो संसार के खुराफात करते हैं, व्याधि किसको होगी ? जब यह व्याधि पकड़नी है तब रूठी हुई नींद रानी को मानने के लिए प्याले के प्याले मद्य चढ़ाये जाते हैं। इससे नींद आती है किन्तु यह आदत को बिगाड़ने वाली चीज है। कुछ दिनों में ऐसी बुरी आदत पड़ जाती है कि बिना शराब के नींद ही नहीं आती। इस प्रकार नींद लाने वाली डाक्टरी दवाइयाँ होती है। आरम्भ में तो उनसे लाभ मालूम होता है, नींद खूब आती है, किन्तु थोड़े ही दिनों में आदत ऐसी बिगड़ती है कि बिना दवा खाये नींद ही नहीं आती। कुछ दिनों में दवा की मात्रा बढ़ानी पड़ती है। बिना मात्रा बढ़ाये नींद नहीं आती। इस प्रकार के उपाय से स्वास्थ्य सदा के लिए चौपट हो जाता है। जो लोग इस प्रकार की औषधियाँ सेवन करते हैं और दोषों को सम करने और आहार को ठीक करने का प्रयत्न नहीं करते उनकी व्याधि घटने के बजाय बढ़ जाती है।

डाक्टर सेसिल वेब जानसन (Dr. Cecil Webb Johnson) ने लिखा है—

जिन को जरा भी कब्ज की शिकायत रहती है वे अच्छी तरह सो नहीं सकते। कब्ज से इतने रोग उत्पन्न हो सकते हैं जितने का हम ध्यान भी नहीं कर सकते। वस्तुतः यदि आँतें साफ रखी जायँ तो नींद न आने की शिकायत बहुत कम हो जाय। भरी हुई आँतें अपने पास के यन्त्रों और रक्त-स्थानों पर दबाव डालती हैं और बहुत से रोगों के उत्पन्न होने का कारण बन जाती हैं। इससे रक्त-परिभ्रमण में बाधा पड़ती है और कुछ ज्ञान-तन्तुओं पर भी दबाव पड़ता है जिससे अनिद्रा की व्याधि

उत्पन्न हो जाती है। इसी से प्रगट हो रहा है कि कब्ज कैसा घातक रोग है। यह रोग आहार में उचित परिवर्तन करने से सहज ही में दूर हो सकता है। अतः यदि हम अपने आप को स्वस्थ रखना चाहते हैं तो यह आवश्यक है कि हम अपने आहार और पेय पदार्थों पर एक बारीक नजर रखें।

कब्ज करने वाली चीजें हैं—अंडे, पनीर, अरारोट, कार्न-फ्लावर, (Cornflour) टैपिओका (Tapioca) चावल, सेम, नये आलू और अखरोट (Nuts) आदि। कब्ज दूर करने वाले पदार्थ हैं—गेहूँ का बिना छना आटा, जव का आटा, मुनक्का, किशमिश, पात गोभी, चना बथआ, पालक, प्याज, केल (Kale) फूल गोभी, ब्रुसल्स स्प्राउड (Brussels), अञ्जीर, अञ्जीर पड़ा हुआ पक्वान, उबालें या सिके हुए अखरोट (Stewed prunes), मुरब्बे (Jam), अमरूद का मुरब्बा (Marmalade) शहद और ताजे पके फल। कब्ज दूर करने के लिए शुद्ध जल पीना बहुत लाभदायक है। जल में नीबू या नारङ्गी का रस पीना भी लाभदायक है।

ऊपर चाय और काफी के विषय में लिखा गया है कि इनसे अनिद्रा की व्याधि उत्पन्न हो जाती है। बहुत से लोग चाय काफी के इतने शौकीन होते हैं कि सोने जाते समय भी चाय पी लिया करते हैं। क्या ऐसे लोग भी इस बात की आशा कर सकते हैं कि उन्हें अच्छी निद्रा आवे। सोने जाने के पहले कोई चीज पीना हानि पहुँचाता है। मूत्राशय भरे रहने से भी अच्छी नींद नहीं आती। इसलिए रात को सोने जाने से पहले पेशाब कर लेना अच्छा होता है।

अच्छी नींद आने के लिए शाम का भोजन ठीक समय पर करने की आवश्यकता है। बहुत से लोग ऐसे देखे जाते हैं जो भोजन करके फौरन सोते हैं। जिनको ऐसी आदत पड़ गई

हो उनके विषय में कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है। रात को अगर सोने के ठीक पहले भोजन करना पड़े तो भारी भोजन कभी न करना चाहिए। और भर पेट डट कर भोजन न करना चाहिए अच्छा यह होता है कि सोने के कम से कम दो घंटे पहले अवश्य भोजन कर लेना चाहिए। दो ढाई घंटे में आहार आमाशय से आगे निकल जाता है, पेट हलका हो जाता है, और नींद अच्छी तरह आती है। रात को ९-१० बजे तक सोना चाहिए। इसलिए सात, साढ़े सात बजे शाम तक भोजन कर लेना अच्छा है।

तम्बाकू पीने से भी नींद ठीक नहीं आती, इसका प्रभाव कुछ नसों (Nerves) पर पड़ता है जिससे निद्रा आने में बाधा पड़ती है। जो तम्बाकू नहीं छोड़ सकते उन्हें चाहिए कि सोने से एक घण्टे पहले ही तम्बाकू पी लिया करें अन्यथा नींद अच्छी न आवेगी। अकसर देखा जाता है कि लोग सोते समय तम्बाकू पीते हैं। इससे नींद तो ठीक आती ही नहीं, अक्सर वे जल भी जाते हैं क्योंकि निद्रा में चिलम गिर जाती है और पीने वालों को पता ही नहीं चलता और वे जल जाते हैं।

नींद लानेवाले पदार्थों में प्याज बहुत अच्छी चीज है। इसे जहाँ तक हो सके कच्चा ही प्रयोग में लाना चाहिए। हमारे धर्मशास्त्र में इसे तामसिक गुण वाला माना गया है और निद्रा भी तामस गुण से ही आती है। केवल दो तीन दिनों के इस्तेमाल से ही इसका गुण मालूम हो सकता है। इससे भोजन पचने में भी सहायता मिलती है। महर्षि चरक ने लिखा है—

> श्लेष्मलो मारुतघ्नश्च पलाण्डुर्न च पित्तनुत्।
> आहार योगी बल्यश्च गुरुर्वृष्योऽथ रोचनः।

अर्थात् प्याज कफ को बढ़ाने वाला और वात-नाशक है पित्त

को शान्त नहीं करता, आहार के लायक, वलबर्द्धक, वृष्य (वीर्य बर्द्धक) और रुचिकर है।

सुश्रुत ने लिखा है—वायु और पित्त से, मन के सन्ताप से, क्षय से और चोट आदि की पीड़ा से निद्रानाश का रोग होता है और इनके विपरीत भावों से निद्रा-नाश की शान्ति होती है।

निद्रा-नाश की व्याधि होने पर शरीर पर तेल मलकर उबटन लगाना और स्नान करना चाहिए। शिर पर तेल मलना और धीरे-धीरे हाथ पाँव और शरीर दबवाना चाहिए। शालि चावल, गेहूँ, पीठी के पदार्थ, शर्करा (खाँड) के बने मधुर चिकने पदार्थ, दूध या मांस रस के साथ में उत्तम भोजन करना चाहिए, बिल में रहने वाले जानवर तथा मुरगे आदि के शोरवे के साथ भोजन करे। दाख, मिश्री, ईख आदि का प्रयोग रात को करे। उत्तम नरम शैया, साफ बिछौना, मुलायम गद्दी, पालकी जैसी नरम सवारी निद्रानाश की व्याधि में हितकारी होती हैं।

———

१३—आहार और स्थूलता

हमारे शरीर में चरबी एक आवश्यक पदार्थ है। इसी से शरीर की गरमी ठीक परिमाण में रहती है। जिसके शरीर में वसा कम होती है उसे गरमी सरदी का असर बहुत जल्द होता है। यही नहीं, कम वसा वाले मनुष्य का चेहरा भरा हुआ नहीं रहता, जोड़ों पर अस्थियाँ स्पष्ट दिखाई देती हैं, हँसली की हड्डी दूर से ही दिखाई देती है। जिनके शरीर में वसा उचित मात्रा में रहती है उनका चेहरा भरा हुआ दिखता है, शरीर भी काफी चिकना जान पड़ता है, हँसली की हड्डी छिपी रहती है। सचमुच वसा का अत्यन्त अभाव स्वास्थ्य के लिए अच्छा नहीं है।

शरीर में गरमी उत्पन्न करने के लिए वसा का उपयोग होता है, जिसके शरीर में वसा का अधिक खर्च होता है, उसके शरीर में वह जमा नहीं होने पाती। किन्तु जिसके शरीर में यह कम खर्च होती है उसके शरीर में इकट्ठा होने लगती है। कुछ लोगों में स्वभावतः वसा कम बनती है और कुछ लोगों में अधिक। जिनमें स्वभावतः वसा कम बनती है और शुक्र का अंश अधिक बनता है। वे दुर्बल होने पर भी बलवान होते हैं, और जिनमें स्वभावतः वसा अधिक और शुक्र कम बनता है वे पुष्ट दिखलाई देते हैं किन्तु उनमें बल नहीं होता। यथा—

आधान समये यस्या शुक्र भागोऽधिको भवेत।
मेदो भागस्तु हीनः स्यात् सकृशोऽपि महाबलः;
मेदाधिको भवेद्यस्य शुक्र भागोऽल्पको भवेत्।
सन्निधोऽपि सुपुष्टोपि बलहीनो विलोक्यते।
भाव प्र०, कार्श्याधिकार, श्लो० ५-६

वसा की उपमा इंधन से दी जाती है, जिसके पास थोड़ा इंधग हो वह उसको जला कर अपना काम करेगा, यदि वह खतम हो जाय तो उसको दूसरे दिन के लिए फिर इंधन इकट्ठा करने की आवश्यकता पड़ेगी। यदि वह प्रति दिन इतना इंधन इकट्ठा कर लेता है जितना वह एक दिन में जला नहीं सकता तो प्रति दिन उसके पास कुछ इंधन बच जायगा। कुछ दिन तो उसे कठिनाई नहीं रहेगी, वह उसे सुरक्षित रखता रहेगा, किन्तु अधिक इकट्ठा हो जाने पर भी यदि वह अपनी इंधन की आमदनी को न रोक सका तो उसे कठिनाई का सामना करना पड़ेगा। फिर तो उसे उस बचे हुए इंधन को उन स्थानों में रखना पड़ेगा जहाँ वह अपने वेशकीमत सामान रखता है, यदि जगह न हुई तो उसे इंधन का गट्ठर सिर पर ले चलना पड़ेगा। ठीक यही दशा वसा की भी है, जब तक वसा की आमदनी और खर्च बराबर होता रहता है तब तक कोई कठिनाई नहीं होती। जब खर्च से आमदनी अधिक होने लगती है, तब वह शरीर में इकट्ठी होने लगती है, कुछ दिनों तक तो इससे कोई विकार नहीं होता किन्तु बाद को चरबी इतनी अधिक इकट्ठी हो जाती है कि सभी मार्ग बन्द हो जाने से शरीर की और कोई धातु बढ़ने नहीं पाती केवल मेद की ही वृद्धि होती है, और उसकी अत्यन्त वृद्धि से मनुष्य बे-काम हो जाता है। लिखा है—

मेदसाऽऽवृत मार्गत्वात पुष्यन्त्यन्ये न धातवः।
मेदस्तु चीयते तस्मादशक्तः सर्व कर्मसु॥

—माधव निदान, मेद रोग, श्लोक २

इस प्रकार मेद बढ़कर पहले तो पेट में इकट्ठा होता है, फिर यकृत और प्लीहा के ऊपर जमा होता है और उनकी क्रिया को मन्द कर देता है, इन अंगों की क्रिया बिगड़ने से स्वास्थ्य और भी अधिक खराब हो जाता है। फिर धीरे-धीरे चेहरा, ठुड्डी के

नीचे, स्तन, चूतड़ आदि में जमा हो जाने से मनुष्य का स्वाभाविक सौन्दर्य नष्ट हो जाता है। फिर पाँव और शरीर के अन्य अङ्गों में चरबी इकट्ठी हो जाती है। कहीं तो मांस के लोथड़े निकल आते हैं, कोई अङ्ग अत्यन्त मोटा हो जाता है। इतना ही हो तो कोई विशेष बात नहीं, मनुष्य निर्बल हो जाता है, क्षुद्र-श्वास चलने लगता है, सहसा साँस रुक जाती है, गले में घर-घर की आवाज़ आती है, ग्लानि होती है, भूख ख़ूब लगती है, दुर्गन्ध-युक्त पसीना आता है, शरीर में शुक्र का अत्यन्त अभाव हो जाने से मनुष्य मैथुन नहीं कर पाता। इस कारण प्रायः ऐसे लोग निस्संतान रह जाते हैं।

विचित्रता यह है कि अधिक भोजन करने पर भी मेद-रोगी बलहीन होता है, इसका कारण यह होता है कि उसके शरीर के सभी मार्ग चरबी से बन्द हो जाते हैं, जठर में रुकी हुई वायु अग्नि को अत्यन्त दीप्त कर देती है, इसी कारण आहार जल्द ही जल जाता है, रस भी सूख जाता है, और मनुष्य शीघ्र ही भोजन की इच्छा करने लगता है, यदि कुछ समय तक उसे भोजन न मिले तो अनेक प्रकार के उपद्रव उठ खड़े होते हैं। यही नहीं भोजन न मिलने पर अग्नि और वायु कुपित होकर उसका प्राणनाश भी कर देते हैं।

संसार में जितने रोग हैं उनमें कुछ संक्रामक रोगों को—जैसे औपसर्गिक मेह, (सूजाक), फिरंगवात (गर्मी) आदि—छोड़-प्रायः सभी रोग भोजन की गड़बड़ी से होते हैं। यह मेद रोग भी भोजन के कारण ही उत्पन्न होता है, यदि पहले से ध्यान रखा जाय और आहार-विहार समुचित रखा जाय तो इस रोग से छुटकारा मिल सकता है, और यह रोग हो भी नहीं सकता।

प्रायः देखा जाता है कि यह रोग कठिन परिश्रम करनेवाले मजदूरों को नहीं होता। परिश्रम करने से मेद का क्षय होता है,

वह जमा नहीं होने पाता। यह उन्हीं धनाढ्यों को पकड़ता है जो बिना परिश्रम किये ही तर माल खाते हैं और तोशक-तकिया पर दिन रात पड़े-पड़े आराम किया करते हैं।

घी, दूध, मलाई, हलवा, पूड़ी, खोया, बरफी, खीर, मोहन-भोग, मक्खन, दही, अण्डे, गोश्त, मछली, चावल आदि अधिक खानेवालों की चरबी अधिक बढ़ा करती है, यदि आरम्भ से ही ये चीजें उचित मात्रा में खाई जायँ और उचित व्यायाम किया जाय तो यह रोग हो ही नहीं सकता। यह रोग कोई हँसी खेल नहीं है, इस कारण इससे सदैव सावधान रहने की आवश्यकता है, यह अपने साथ कई रोग उत्पन्न करता है, शरीर की रोग-नाशक शक्ति क्षीण हो जाती है, उम्र कम हो जाती है, मेद-रोगी एक भी ऐसा नहीं मिलेगा जिसकी आयु सौ बरस तक पहुँची हो। तुलनात्मक दृष्टि से विचार करने पर यही कहना पड़ता है कि मोटे आदमियों से दुबले आदमी अच्छे हैं। मोटे आदमियों को जीवन में कभी सुख नहीं मिलता। उनमें कर्मण्यता तो रह ही नहीं जाती।

मोटापन दूर करने के बहुत से उपाय हो सकते हैं; किन्तु वे सब सहायक मात्र हैं, प्रधान उपाय यही है कि भोजन की मात्रा कम की जाय और भोजन सामग्री ऐसी हो जिसमें यथा-सम्भव वसा बनाने वाले पदार्थ कम हों। डाक्टर सेसिल वेब जानसन (Dr. Cecil Webb Johnson) ने लिखा है—

मोटा मनुष्य अपने आपको व्यायाम करने के लिए बाध्य कर सकता है, और क्षीणता लाने वाले और सभी उपायों का अवलम्बन कर सकता है किन्तु यदि वह शर्करा और शर्करामय अन्य पदार्थों का सेवन जारी रखेगा तो वह प्रति दिन मोटा ही होता जायगा और उसके शरीर में वसा की वृद्धि होती ही जायगी।

लंडन शहर में बैटिंग मामक एक सौदागर था। वह बहुत ही मोटा हो गया था और उसका जीवन संकटमय था। उसके गृह-चिकित्सक डाक्टर हार्वे (Harvey) थे। उन्होंने उसे एक आहार का नकशा बताया था। उसे हम पाठकों की जानकारी के लिए नीचे देते हैं। उस भोजन से बैटिङ्ग को बड़ा लाभ हुआ। एक साल के भीतर १४ स्टोन ६ पौंड से घटकर उनका वजन ११ स्टोन २ पौंड हो गया था—

नाश्ता—५-६ औंस मछली, या सुअर के गोस्त के अतिरिक्त अन्य कोई गोश्त। एक विसकुट या एक औंस सूखा स्टोट। एक प्याला चाय या काफी बिना दूध और शकर के।

दोपहर का भोजन—नाश्ता के समान ही मछली या गोश्त; आलू, चुकन्दर (Parsnips), सलगम (Turnips), बीटरूट (Beetroots) और गाजर के अतिरिक्त अन्य कोई तरकारी, सूखे टोस्ट, बिना चीनी मिलाए हुए उबाले फल, पीने के लिए फ्रांसीसी शराब (Claret) और स्पेनिश शराब (Sherry), चाय— उबाले हुए फल, हलकी रोटी (Rusk) और बिना चीनी और दूध के चाय।

रात का भोजन—दोपहर के भोजन के समान ही गोश्त या मछली, सूखे टोस्ट और फ्रांसीसी शराब।

इस नकशे में यह ध्यान देने की बात है कि इसमें शर्करा या शर्करामय पदार्थों का नितान्त अभाव है और भोजन की मात्रा भी २१ से २७ औंस के भीतर ही है। योरोपीय देशों में मांस बहुत खाया जाता है इसीलिए मांस की व्यवस्था ऊपर की गई है। हमारे देश के लिए मांस जरूरी नहीं है।

उपवास से भी इस रोग में आश्चर्य-जनक लाभ होता है, किन्तु दो एक दिन के उपवास से इसमें विशेष लाभ नहीं होता, लम्बे उपवास की आवश्यकता पड़ती है। मेद रोगी को एकाएक

लम्बा उपवास न शुरू करना चाहिए, क्योंकि इसमें जीवन-संकट उपस्थित हो सकता है, जैसा कहा जा चुका है कि इस रोग में भूख ख़ूब लगती है, और भूख के एकाएक रोकने से अन्य उपद्रव खड़े हो जाते हैं। अतः जो लोग उपवास करना चाहें उन्हें आरम्भ में उपवास की आदत डालनी चाहिए। पहले कुछ दिनों तक एक वक्त का ही उपवास रखें, फिर एक दिन का उपवास करें। जब कुछ दिन इस प्रकार बीत जाय तब दो दिन का उपवास करें। इस प्रकार दस पाँच बार दो दिनों का उपवास करके ३-४ दिन तक का करें। ज्यों-ज्यों आदत पड़ती जाय क्रमशः उपवास की मात्रा बढ़ाते जायँ। इस प्रकार डेढ़ वर्ष तक उपवास करने की आदत डालनी चाहिए। एक दो दिनों के उपवास से हानि नहीं होती, इस कारण इसमें डाक्टरों से विशेष परामर्श की आवश्यकता नहीं रहती। किन्तु यदि लम्बे उपवास की—एक सप्ताह की भी—आवश्यकता हो तो बराबर किसी सुयोग्य चिकित्सक से परामर्श लेते रहना चाहिए।

फलाहार भी मेद रोग को कम कर सकता है। डाक्टर अलेक्ज़ेंडर हैग (Dr. Alexander Haig) ने, जो एक प्रसिद्ध शाकाहारी थे, लिखा है—'जो लोग मोटे हैं और दुबला होना चाहते हैं, उनको फल और बिसकुट पर ही जीवन निर्वाह करना चाहिए, पानी आदि पेय पदार्थ उतना कम लेना चाहिए जितना सम्भव हो, अन्य पेय पदार्थों के स्थान पर फलों का रस लेना अच्छा है। सूखे और ताजेफल तथा बिसकुट की मात्रा निश्चित नहीं है। ये चीजें भूख भर खाई जा सकती हैं। जिन लोगों को ख़ूब भूख लगती है और ३० औंस या इससे अधिक बिसकुट खा जाते हैं, वे दुबले न होंगे। अधिकांश लोग ७-८ औंस बिसकुट दिन भर में खाते हैं और शेष फल खाते हैं और उनका वजन ¼ पौंड या इससे कुछ अधिक के हिसाब से

प्रति दिन घटता है। दो या तीन पौंड प्रति सप्ताह तक मैं वजन कम करता हूँ। यदि प्रति सप्ताह ३ पौंड से अधिक वजन घटता है तो मैं थोड़ी अंडे की सफेदी भी देता हूँ जिसमें कुछ-कुछ क्षति की पूर्ति होती रहे।"

निस्सन्देह फलाहार उत्तम है किन्तु जिन लोगों को मेद रोग होता है भला वे इस प्रकार का भोजन पसन्द करेंगे ? जो लोग सुख की गोद में पले हैं और आराम की जिन्दगी बसर करते हैं वे एकाएक इस तरह के आहार पर कई मास तक रह भी नहीं सकते। उनके लिए इस प्रकार संयमित भोजन करना मृत्यु-यंत्रणा से कम दुखदायी न होगा। अधेड़ उम्र के लोग तो इस प्रकार का जीवन कभी पसन्द ही न करेंगे। वे कुछ दिन तक ऐश आराम के साथ ही जीना पसन्द करेंगे।

सौभाग्य की बात यह है कि ऐसी कठिनाई हमारे देश में नहीं है, यहाँ के अधिकांश लोग शाकाहारी और अमद्यपी होते हैं, बल्कि यहाँ भर पेट भोजन मिलना मोहाल है, इस कारण इस रोग की भयंकरता यहाँ बहुत कम देखने में आती है।

इस रोग में व्यायाम करना लाभदायक है, किन्तु मेद रोगी का हृदय अत्यन्त निर्बल होता है, इस कारण उसे बड़ी साव-धानी से व्यायाम करना चाहिए। आरम्भ में उसे हलका व्यायाम ही ठीक है। थोड़ा-थोड़ा चलने का अभ्यास बढ़ना चाहिए, भोजन की मात्रा कम करनी चाहिए। मेद रोग बढ़ाने वाले आहार एक दम त्याग देना चाहिए। चाय, काफी और शराब का प्रचार हमारे देश में है ही नहीं, थोड़े से नकलची बाबुओं के यहाँ इनका प्रचार है, उन्हें भी इस कुरीति को छोड़ देना ही अच्छा है।

हमारे विचार से रोगी को सिर्फ दो बार भोजन करना चाहिए। एक बार दिन में, दूसरी बार रात में। सप्ताह में एक

वक्त का उपवास अवश्य करना चाहिए। और महीने में एक दिन का। यदि यह उपवास की मात्रा बढ़ाई जाय तो और अच्छा है, गोश्त मछली आदि एक दम त्याग देना चाहिये। पुराना चावल, मूँग, कुलथी और जव का भोजन करना चाहिए। साँवा का प्रयोग अत्यन्त लाभदायक है। भोजन करते समय जल और भी कम पीना चाहिए। भोजन के पहले शहद का शरबत पीना अधिक अच्छा है। जव का सत्तू, जीरा, सोंठ, हींग, काला नमक और दही का तोड़ एक में मिलाकर पीना लाभदायक है। मेद रोगी को सुख से गद्दे आदि पर न बैठना चाहिए। मानसिक चिन्ता, परिश्रम, रात का जागना, मैथुन और मार्ग चलना, कम भोजन करना ये सब मोटेपन को दूर करते हैं।

इस प्रकार का आहार-विहार कुछ दिनों तक लगा तार रखना चाहिए, तभी लाभ हो सकता है। इस रोग में एक दो दिनों में कोई लाभ नहीं होता। बरसों तक पथ्य भोजन पर ही रहना चाहिए।

कुछ दिन तरकारियों का रस जैसे ककड़ी का रस, खीरे का रस, सलजम का उबाल कर निकाला रस, प्याज पालक आदि का उबाला रस, टमाटर का रस और फल खाने से वजन जल्द घटता है। इस तरह के भोजन के साथ-साथ टहलना और दूसरी तरह के व्यायाम भी करते रहना चाहिए। जब इच्छानुसार वजन घट जाय तब भी पथ्य भोजन ही करना चाहिए और इस प्रकार का भोजन लेना चाहिए जिससे फिर मोटापा न बढ़ने पावे। अकसर ऐसा देखा जाता है कि वजन घट जाने के बाद फिर लोग इस तरह घी चीनी मैदा चावल गोश्त आदि खाना शुरू करते हैं कि वजन फिर बढ़ने लगता है और पहले का सारा परिश्रम जिससे वजन घटाया गया था व्यर्थ जाता है।

१४—आहार और वृद्धत्व

इस समय हमारे भारतवर्ष में अज्ञानान्धकार के कारण लोगों का स्वास्थ्य तो चौपट हो ही रहा है, रोग भी धड़ाधड़ बढ़ते चले जा रहे हैं। हम लोगों ने अपने पूर्वजों की रीतियों को ठुकरा दिया, नई सभ्यता से जकड़ गये। अपना धर्म और धन दोनों नष्ट कर दिया। ये तो सामान्य सी बातें थीं, किन्तु पुरानी परिपाटी को त्याग कर हमने एक चीज ऐसी खोई है जिसकी पूर्ति उस समय तक नहीं हो सकती जब तक हम अपने पूर्वजों की रीति पर स्वयं न चलेंगे और अपनी सन्तान को चलना न सिखलायेंगे। वह खोई हुई अमूल्य वस्तु दीर्घ जीवन है। पुराने ग्रन्थों से सिद्ध है कि हमारे ऋषि मुनि ५-५ हजार वर्ष तक पूर्ण स्वस्थ जीवित रहते थे। साधारण गृहस्थ भी सौ वर्ष उक स्वस्थ जीते रहते थे। आयुर्वेद के मतानुसार मनुष्य की आयु १२० या १२५ वर्ष की होनी चाहिए।

योरोपीय देश आज कल उन्नति के शिखर पर विराजमान है। वहाँ के विद्वान अपने देश के लोगों के स्वास्थ्य-वर्द्धन के लिए नित्य नये खोज किया करते हैं, उनका जनता में प्रचार करते हैं। उनको ऐसा करने के लिए राजकीय सहायता मिलती है। आज से सौ सवा सौ वर्ष पूर्व इङ्गलैण्ड के लोगों का स्वास्थ्य बिलकुल गिरी हुई दशा में था, लोगों की आयु की औसत कम हो गई थी। इस दशा से वहाँ के विद्वानों को बहुत दुख हुआ। उन्होंने उद्योग किया और सफल हुए। आज कल वहाँ रोग का उतना प्रावल्य नहीं है, औसत जीवन भी आज कल ४६-४८ वर्ष से कम नहीं है, ऐसी स्थिति जर्मनी और अमेरिका की भी है।

दुर्दैव की प्रेरणा से हमारे भारतवर्ष की दशा अत्यन्त शोचनीय है। यहाँ के निवासियों का स्वास्थ्य चौपट हो गया है, शरीर रोगों का अड्डा सा बना हुआ है। यहाँ का औसत जीवन २३ वर्ष का है, ऐसी शोचनीय दशा संसार में और कहीं नहीं है। २३ वर्ष औसत जीवन का अर्थ यह है कि यहाँ के नौजवान युवा वस्था प्राप्त करने के पहले ही महायात्रा कर जाते हैं। जहाँ के लोगों का जीवन इतना अल्प हो, वहाँ की भौतिक और आध्यात्मिक अवस्था कैसी होगी इसकी विवेचना की आवश्यकता नहीं।

योरोपियनों के पूर्वज जिस प्रकार ज्ञान-हीन और जङ्गली थे वैसी दशा हमारे भारतवर्ष की नहीं है, केवल ३०० वर्ष पहले योरप के लोगों को साधारण बातों का भी ज्ञान नहीं था। आजकल भी स्वास्थ्य सम्बन्धी जितने नये नियम बनते हैं वे प्रायः हमारे आयुर्वेद के ही अंश रहते हैं। इस सम्बन्ध में एक योरोपीय विद्वान भूतपूर्व सर्जन जेनरल सर पार्डी ने कहा है—

वर्तमान काल की बहुत सी शोधें प्राचीन काल के भारतीयों की की हुई शोधों की पुनर्शोध ही हैं।" ऐसी स्थिति में यदि हम अपने पूर्वजों की बातों पर श्रद्धा-पूर्वक विश्वास करके अपनी रहन-सहन उनकी आज्ञानुसार रखते तो ऐसी स्थिति कभी न उत्पन्न होती, किन्तु हम लोगों में जो शिक्षित हैं उनकी रुचि आदरणीय आयुर्वेद की ओर कम है, जो लोग अशिक्षित हैं उनको शिक्षा देनेवाला कोई नहीं है। इस उदासीनता का परिणाम प्रत्यक्ष है। हम पतन के गर्त्त में गिरते ही जाते हैं।

वृद्धता का परम मित्र परिमाण से अधिक भोजन करना है। जो लोग अपने पेट की चिन्ता रखते हैं और उस पर आवश्यकता से अधिक बोझ नहीं लादते उनको बुढ़ापा जल्द नहीं

घेरता। यकृत ठीक रखने से वृद्धावस्था की तकलीफ नहीं होती। इसके लिए सब से अधिक आवश्यक यह है कि प्राकृतिक भोजन किया जाय। इसका प्रमाण यह है कि आज तक जितने भी शत-वर्ष जीवी मनुष्य हुए हैं सब साधारण गृहस्थ ही थे। उनका भोजन साधारण और प्राकृतिक हुआ करता था। भारी और गरिष्ट भोजन करनेवाले अमीर वंश में एक भी आदमी ऐसा नहीं हुआ जिसका जीवन काल सौ वर्ष तक पहुँचा हो। अमीर जिनके पास पैसे बहुत अधिक होते हैं, जबान के गुलाम होते हैं, सुख भोग में जीवन व्यतीत करते हैं, किन्तु साथ ही अपने जीवन के दिन भी कम करते हैं। हमारे ऋषि मुनि साधारण से भोजन पर जङ्गलों में जीवन व्यतीत करते थे और दीर्घ जीवन का मीठा आनन्द भोगते थे। तत्वदर्शी और स्वार्थहीन डाक्टर भी हमारे यहाँ के सिद्धान्तों को मानते हैं और उसकी महत्ता स्वीकार करते हैं, किन्तु हम ऐसे नकलची होते चले जा रहे हैं कि अपनी पुरानी चीजों को कूड़ा समझ कर छोड़ते जा रहे हैं। पहले हमारा भोजन सादा था अब दूसरों की देखा देखी हम भी जबान के गुलाम हो गये। हमारी थाली जब तक सुखमय पदार्थों से भरी नहीं रहती सन्तोष नहीं होता। योरप की विला-सिता देखकर प्रसिद्ध चिकित्सक सर लाडर ब्रूटन (Sir. Lauder Bruton) ने कहा था—

साधारण गृहस्थ का भोजन सम्भव है अत्यन्त रुचि-कारक न हो किन्तु जीवन सूत्र बढ़ाने के लिए यह एक अमोघ साधन है। और जो लोग विलासपूर्ण जीवन व्यतीत कर सकते हैं उनके लिये भी कभी कभी ऐसा भोजन ग्रहण करना लाभप्रद सिद्ध होता है। एक और अधिकारी का कहना है—कि दूध क्रीम हलकी पुडिङग और अण्डे तथा उबाले हुए थोड़े गोश्त आदि खाने से मनुष्य रोग मुक्त रह सकता है। इसने थोड़ा खाने के पक्ष

में लिखा है। भोजन कम खाया जाय किन्तु खूब कुचल कर खाया जाय जिसमें पेट को पचाने में कम परिश्रम करना पड़े। और शरीर को आवश्यक तत्व भी प्राप्त हो जाय।

डाक्टर सेसिल वेब जानसन (Dr. Cecil Webb Johnson) ने कहा है—

मैंने सौ मनुष्यों से अधिक मनुष्यों की जाँच की जो ८२ और सौ वर्ष के बीच के थे। उनमें से अधिक सम्पन्न घराने के थे। वे सब सादा जीवन व्यतीत करने वाले थे। उनका खानपान सादा था। कुछ तो बिलकुल शाकाहारी थे। और दूध, पनीर, मक्खन खाते थे। हाँ कभी कभी अण्डे भी ले लिया करते थे। उन्होंने शायद ही मांस खाये हों।"

आज भी (सन् १९३२) चीन में एक व्यक्ति जीवित है। उसकी अवस्था ३०० वर्ष के लगभग है, और वह पूर्ण स्वस्थ जैसा है, वह संसार में सब से बूढ़ा जीवित मनुष्य है। उसने अपने विषय में अखबारों में प्रकाशित कराया है, वह पहले औषधियों का व्यापार करता था। सम्भवत: ब्राह्मी बूटी का सेवन करता है। हम पाठकों के मनोरंजन के लिए उसके दीर्घ जीवन सम्बन्धी इतिहास को नीचे दे रहे हैं—

इस वृद्ध पुरुष का नाम "ली चिग जून" है। यह चीन के एक ग्राम में रहता है, वहाँ उसे शुद्ध स्वच्छ वायु मिलती है, उन्मुक्त आकाश और प्रकाश मिलता है, वहाँ कारखानों के धुवें और गाड़ियों की खड़खड़ाहट मनुष्य की शान्ति में बाधा नहीं डालती। वहाँ का जीवन भी सादा है, खेतों में परिश्रम से काम करना और सादा अन्न भोजन करना यही वहाँ की दिनचर्या है।

इस पुरुष की पाचनशक्ति अत्यन्त उत्तम है, दाँत तेज और चमकीले हैं, आँखों में आभा और गालों पर लाली अठखेलियाँ

करती हैं। इस वृद्धावस्था में भी उसमें ताकत और फुर्ती बनी हुई है, वह अब भी पैदल चलता है।

इस वृद्ध पुरुष का कहना है कि स्वास्थ्य-पूर्ण दीर्घ जीवन के लिए चार बातों की आवश्यकता है—

१—गहरी साँस लेना—गहरी साँस लेने से शुद्ध वायु अधिक मात्रा में अन्दर जाती है और खून की गति तेज हो जाती है, स्वास्थ्य बढ़ता है।

२—अपनी इन्द्रियों और मानसिक वृत्तियों का निरोध। मनुष्य को चाहिए कि प्रतिदिन खुली वायु में इन्द्रियों के विषय से हटकर आत्म-चिन्तन करे। इस प्रकार करने से मनुष्य उन्नति की ओर अग्रसर होता है।

३—सदैव अपने को शान्त रखना चाहिए। काम, क्रोध ईर्षा आदि से शरीर में एक प्रकार का विष उत्पन्न होता है जो मारक होता है, अतः मनुष्य को इन शत्रुओं से सदैव बचना चाहिए।

४—ख़ूब गहरी नींद सोना चाहिए। नींद अत्यन्त स्वास्थ्य-वर्द्धक है, इससे शरीर में नवीन स्फूर्ति आती है। उन लोगों को गहरी नींद नहीं आती जो दिनभर निठल्ले बैठे रहते हैं। गहरी नींद लाने के लिए शारीरिक परिश्रम करना चाहिए। अतः यह आवश्यक है कि मनुष्य दिनभर परिश्रम करे और रात को गहरी नींद सोवे।

योरप आदि देशों में भी कुछ दीर्घजीवी लोग हुए हैं और हैं। उन सब का आहार-विहार सादा था। भारतवर्ष में भी यह बात आसानी से देखी जा सकती है कि दिन भर कठिन परिश्रम करके खेतों में काम करनेवाले और रूखा सूखा अन्न और देहाती फल खाने वाले शहराती बाबुओं और सेठों से अधिकांश में दीर्घ-जीवी होते हैं। उनमें कोई दुर्व्यसन नहीं है, वे अपने ढोरों के साथ

जङ्गल में मस्त पड़े रहते हैं। मट्ठा और जव की रोटी बेफिक्र होकर खाते हैं, उनका स्वास्थ्य भी अच्छा रहता है और वे दीर्घ जीवन भी प्राप्त करते हैं। साग सब्जी फल आदि वे स्वाभाविक रूप में खाते हैं। उन्हें उन चीजों के मुरब्बे आदि बनाने की आवश्यकता नहीं पड़ती, अत: वे उन चीजों का वास्तविक गुण भी प्राप्त करते हैं।

दीर्घ जीवन के साथ स्वस्थ रहना आवश्यक है। यदि दीर्घ जीवन मिले और स्वास्थ्य न रहे तो वह भार रूप हो जाता है, अत: हम लोगों को सदैव स्वस्थ और साहस-पूर्ण दीर्घजीवन प्राप्त करने की चेष्टा करनी चाहिए। अधिकांश में शाकाहारी ही अधिक जीवित रहते हैं। इसके विरुद्ध भी उदाहरण पाये जाते हैं। डाक्टर जार्ज चेनी (Dr. George Cheyne) ने मांसाहार के विषय में अपनी राय इस प्रकार दी है—

कर्ता ने मनुष्य की स्वाभाविक आयु कम करने के लिए ही मांस भक्षण करने की आज्ञा दी है जिसमें पाप, दरिद्रता और बलवे की वृद्धि न हो।

डाक्टर सेसिल वेब जानसन की राय में थोड़ा मांस खाने में कोई आपत्ति नहीं है, किन्तु अधिक माँस खाने के विरुद्ध वे भी हैं। उन्हीं के शब्दों में सुनियें—

"यह सत्य है कि अधिक मांस खाने से आयु क्षीण होती है" जो लोग मांस अधिक खाते हैं उन्हें अकसर गठिया की बीमारी हो जाती है। खून भी विकृत हो जाता है, शरीर में यदि फोड़ेफुन्सी हो जाते हैं तो वे जल्द अच्छे नहीं होते।

एक बार ब्रिटिश मेडिकल एसोसियेशन (British Medical Association) के एक दल ने कुछ दीर्घ जीवी लोगों की जाँच की। उस जाँच में उन्हें पता लगा कि वे सब के सब थोड़ी मात्रा

में मांस खानेवाले थे। जो वस्तुतः मांसाहारी थे उन्होंने भी अधेड़ होने पर मांस खाना बन्द कर दिया था।

अधिक मांस खाने से गुर्दे पर दबाव पड़ता है और उनमें विकृति उत्पन्न हो जाती है, इससे कब्ज भी उत्पन्न होता है जो सभी रोगों का जनक है। मांस से ही कैंसर और अपस्मार (Epilepsy) और और भी अनेक भयंकर रोग उत्पन्न होते हैं। इसके अतिरिक्त यह तमोगुणी है, इससे क्रोध बहुत आता है। क्रोध पाप का मूल है, क्रोधी मनुष्य अपनी किसी तरह की उन्नति नहीं कर सकता। अतः यह नहीं कहा जा सकता कि मांसाहार अच्छा है।

मांसाहार से रक्त-भार बहुत बढ़ जाता है, अक्सर मांसाहार के कारण ही अपरस (Eczema) होता है। स्कर्वी नामक रोग मांस खाने से ही होता है, और ताजे फल और तरकारियों के खाने से अच्छा होता है, इसका प्रमाण हम पक्षियों और पशुओं के जीवन से पा सकते हैं जो केवल फल और घास-पात पर अपना जीवन व्यतीत करते हैं। उनमें कभी कोई रोग नहीं होता, जब तक जीते हैं स्वस्थ रहते हैं। किसी ने सच कहा है—रसायन शास्त्र के आविष्कार के साथ ही जीवन-ह्रास आरम्भ होता है। यदि मनुष्य तरह तरह के कृत्रिम आहार का आविष्कार न करता तो शायद उसकी यह दशा न होती जो हम आज देखते हैं। लंडन के एक सम्भ्रान्त मनुष्य के विषय में यह प्रसिद्ध है कि ५० वर्ष की अवस्था में उनमें इतनी शक्ति और स्फूर्ति भरी थी जितनी ३० वर्ष के युवक में होती है। उनमें इस प्रकार की शक्ति का रहस्य उनके व्यायाम और फलाहार में निहित था। वे प्रति-दिन रमणीय प्रातःकाल में स्वच्छ खुली वायु में टहलते थे। जब थक कर बाग में पड़ी किसी बेंच पर बैठते तो सेब और संतरे खाते थे।

अंगूर, सेब, संतरे, यह बहुत अच्छे फलों में से हैं और इनके

अन्दर प्रकृति की विचित्र शक्ति भरी हुई है, हरी तरकारियाँ प्रतिदिन मिलनी चाहिए। वे सादे ढङ्ग से बनी हों। इनका गुण अवर्णनीय है, ये सब कब्ज को दूर करते हैं। इसके अतिरिक्त इनमें खाद्योज (Vitamin) नामक तत्व पाये जाते हैं जिसके बिना हमारा जीवन स्थिर रह ही नहीं सकता। डाक्टर सेसिल वेब जानसन मिश्रित भोजन पसन्द करनेवाले हैं क्योंकि उन्होंने ऐसा कई स्थानों पर कहा है। किन्तु फलों पर मुग्ध होकर उनको भी कहना पड़ा है—

स्वास्थ्य और शक्ति स्थिर रखने के लिए मांसाहार का त्याग करना चाहिए और उसके स्थान पर शाकाहार और फल आरम्भ करना चाहिए।

यह सदैव स्मरण रखने की बात है कि पाचन-क्रिया ठीक रखने से बुढ़ापा जल्द नहीं आता। और उसी की क्रिया स्वस्थ रहने से वृद्धावस्था में भी मनुष्य स्वस्थ रह सकता है। लिखा भी है—

अग्नि मूलं बलं पुंसा रेतो मूलं च जीवितं
तस्मादग्नि च शुक्रंच यत्नेन परिरक्षयेत्।

अर्थात् पाचकाग्नि बल का मूल है और शुक्र जीवन का मूल है इसलिए अग्नि और शुक्र की यत्न पूर्वक रक्षा करनी चाहिए।

भोजन के साथ जल पीना पाचन-क्रिया का सबसे बड़ा शत्रु है। भोजन के साथ जल पीने से पेट तन जाता है और पाचक रस पतला पड़ जाता है और पेट की मांसपेशियाँ भोजन पचाने का काम ढीला कर देती हैं। भोजन के साथ उन्हींको जल पीने की आवश्यकता पड़ती है जो उसे बिना अच्छी तरह चबाये जल्दी जल्दी निगलते हैं। भोजन सदैव अच्छी तरह चबा कर निगलना चाहिए। चबाकर निगले हुए भोजन को पचाने में पेट को सुविधा होती है और खाते समय अधिक जल पीने की आवश्यकता नहीं पड़ती। डाक्टर सेसिल वेब जानसन ने लिखा है—

भोजन के एक घन्टे बाद तक किसी तरह का तरल पदार्थ नहीं लेना चाहिए। अर्थात् जल आदि पतले पदार्थ भोजन के एक घन्टे बाद लेना चाहिए। हमारा आयुर्वेद जल पीने के मामले में इतना सख्त नहीं है। लिखा है।

अत्यंबु पानान्न विपच्यतेऽन्नं, निरम्बुपानाच्च स एव दोषः।
तस्माद्धि वह्नि विवर्द्धनाय मुहुर्मुहः वारि पिबेदभूरी॥

अर्थात् भोजन के साथ अधिक जल पीने से अन्न ठीक तरह नहीं पचता और बिलकुल जल न पीने से भी यही दोष उत्पन्न होता है। इसलिए अग्नि को बढ़ाने के लिए थोड़ा-थोड़ा पानी बीच बीच में पीते रहना चाहिए। वस्तुतः भोजन के बीच बीच में एक आध घोंट जल पीते रहने से अच्छा भी रहता है। एक घन्टे बाद अच्छी तरह जल पीना चाहिए।

कभी-कभी थोड़ा-थोड़ा उपवास भी करते रहना चाहिए। इससे पाचन क्रिया को बल मिलता है, पेट में अनावश्यक चीजें इकट्ठा नहीं रहने पातीं। जिस प्रकार कुछ दिन काम करने के बाद दफ्तर के बाबुओं को एक दिन आराम करने को मिलता है उसी प्रकार पेट को भी कभी आराम मिलना चाहिए। यह आराम कम से कम १५ दिन में एक दिन का अवश्य होना चाहिए। जो लोग ऐसा न कर सकें वे सप्ताह में एक वक्त का उपवास कर सकते हैं। जो लोग इस प्रकार अपने पेट को आराम देते रहते हैं उन्हें लम्बे उपवास की भी आवश्यकता नहीं पड़ती। लम्बा उपवास सदैव किसी चतुर चिकित्सक के परामर्श से करना चाहिए।

स्वास्थ्य और दीर्घ जीवन की कुंजी यह है कि सादा भोजन किया जाय और फल तरकारी का यथेष्ट उपयोग किया जाय। रोटी चावल से तिगुना चौगुना फल तरकारियाँ खायी जायँ और व्यायाम खूब किया जाय।

१५—आहार और प्रमेह

आयुर्वेद में प्रमेह बीस प्रकार के माने गये हैं। दस प्रकार के प्रमेह कफ से उत्पन्न होते हैं, ६ प्रकार के पित्त से और चार प्रकार के वात से। कफज प्रमेह साध्य होता है, पित्तज कष्टसाध्य और वातज असाध्य।

जब प्रमेह रोग होनेवाला होता है तो दाँत, आँख और तालू में मल उत्पन्न हो जाता है, हाथ पाँव में जलन होती है, शरीर चिकना मालूम होता है, प्यास लगती है और मुँह का स्वाद मीठा हो जाता है।

प्रमेह अकसर भोजन के व्यतिक्रम से ही उत्पन्न होता है और इसी गलती से बढ़ता जाता है। प्रमेह उत्पन्न होते ही यदि सावधानी से उसके दूर करने की फिक्र न की जाय तो थोड़े ही दिन में रोग असाध्य हो जाता है। वैसे तो इस रोग में औषधि काफी काम करती है किन्तु आहार में सुधार करने से आश्चर्य-जनक लाभ होता है। आयुर्वेद में प्रमेह होने का कारण इस प्रकार लिखा है—

> आस्या सुखं स्वप्न सुखं दधीनि
>
> ग्राम्यौदकानूप रसाः पयांसि।
>
> नवान्न पानं गुडवैकृतं च
>
> प्रमेह हेतुः कफकृच्च सर्वम्॥

अर्थात आराम के साथ गद्दे कुरसी आदि पर बैठे रहने से परिश्रम न करने से, मसनद आदि पर सुख पूर्वक सोने से, दही,

बकरी, भेड़, दुम्मा भेड़, मछली, कछुआ, हंस चक्रवाक आदि का मांस खाने से, दूध और दूध से बनी अन्य चीजें खाने से, नया अन्न और नया पानी पीने से, गुड़ चीनी मिश्री आदि के खाने से और कफवर्द्धक आहार-विहार से प्रमेह रोग उत्पन्न हुआ करता है। प्रमेही को इन सब कारणों से बचना चाहिए। उसे थोड़ा परिश्रम अवश्य करना चाहिए और ऊपर लिखी हानिकारी वस्तुओं को छोड़ देना चाहिए। इसी बात को डाक्टर सेसिल वेब जान-सन (Dr. Cecil Webb Johnson) ने इस प्रकार लिखा है—

चीनी प्रधान त्याज्य पदार्थों में से है। क्योंकि यकृत द्वारा यह ग्लाइकोजिन (पचने वाली चीनी) में परिवर्तित किया जाता है। कभी कभी यकृत उतना काम करने में असमर्थ हो जाता है जितना उसके ऊपर छोड़ा जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि चीनी उन स्थानों में भी पाई जाती है जहाँ उसका कुछ भी काम नहीं है और पेशाब में शक्कर आने लगती है। इस कारण भोजन में से कार्बोज (starch) एकदम निकाल देना चाहिए। क्योंकि शक्कर इसी से बनाई जाती है। इस कारण रोटी और आलू जिनको साधारण लोग बड़ी रुचि से खाते हैं, का त्यागना आवश्यक हो जाता है।

आटा, चावल, साबूदाना, मुरब्बे, अमरूद के मुरब्बे, मीठे फल, शरबत, लपसी, हलवा, लड्डू, मिठाइयां, खीर, आलू, गाजर, शलगम (Turnip), चुकन्दर (Parsnip), मटर, सेम प्याज, टोमैटो, फूलगोभी, सिलेरी, लिट्यूस, बीट रूट (Beet root) आदि तथा ऐसी ही अन्य तरकारियाँ प्रमेही को न खानी चाहिए। क्योंकि इन सब चीजों में या तो शक्कर होती है, या कार्बोज।

मांस के विषय में ऊपर लिखा जा चुका है। इस रोग में

मांस प्राय: हानिकार होता है। जो लोग मांस बिना रह ही न सकें और उनका हाजमा ठीक हो तो कोई हलका मांस जैसे तीतर लवा, बटेर आदि खा सकते हैं किन्तु हमारी राय में इस रोग में मांस का सर्वथा त्याग करना लाभदायक है। डाक्टरों की राय में इस रोग में एप्रीकाट्स (Apricot), कार्नबेरी (Cornberry), मुनक्का, शफतालू (Peaches), रास्पबेरी (Raspberry), रेवत चीनी (Rhubarb) और स्ट्राबेरी (Strawberry) खाने में हर्ज नहीं है। यदि इनको पका कर खाना हो तो बिना चीनी डाले ही खाना चाहिए। हाँ, सेकरीन (Saccharine, यह एक प्रकार की चीनी है परन्तु यह चीनी से कई गुना अधिक मीठी होती है) मिलाई जा सकती है। जैतून और सभी तरह के कोषवाले फल (nuts) खाये जा सकते हैं किन्तु शाह बलूत (Chest-nut) हानिकर होता है। क्रीम, अण्डे, पनीर (Cheese) और मक्खन खाने की सिफारिश डाक्टर नहीं करते हैं। डा० सेसिल वेब जानसन (Dr. Cecil Webb Johnson) ने लिखा है—

क्रीम, अण्डा, पनीर और मक्खन इस रोग में मना नहीं है बल्कि देने की सलाह दी जाती है।

प्रमेह में फलाहार बड़ा लाभदायक होता है। जिनको कब्ज की शिकायत रहती हो उन्हें फल का अभ्यास बढ़ाना चाहिए। प्रमेह में कब्ज रहना अच्छा नहीं है। प्रमेही को सप्ताह में एक दिन उपवास अवश्य करना चाहिए जिससे पाचकयन्त्र, और गुर्दे को पूरा आराम मिल जाय। जब बहुत भूख मालूम हो तब थोड़ा फल आदि खाया जाय तो अच्छा है।

इस रोग में लम्बे उपवास की आवश्यकता उतनी नहीं रहती जितनी भोजन सुधार की रहती है। हलके उपवास एक दो दिन का करने में कोई कठिनाई नहीं पड़ती। उपवास के बाद फल

खाये जायँ और दूध पिया जाय। दो तीन दिन फल और दूध पर रह कर धीरे धीरे रोटी सब्जी शुरू की जाय। एक वक्त रोटी सब्जी और शाम को दूध और फल लिया जाय। ज्यादा खट्टे फल न लिए जायँ। कसैले फल जैसे जामुन, या अमला अच्छा होता है। जामुन खाने से पेशाब में चीनी जाना बन्द हो जाता है। परन्तु जामुन का दूध के साथ विरोध है यह न भूलना चाहिए।

उपवास काल में यथा सम्भव आराम करना अच्छा होता है। क्योंकि उपवास काल में आहार न मिलने से अधिक परिश्रम करने पर थकावट आती है।

प्रमेह में अधिक जल पीने से हानि होती है, इस कारण जरूरत के अनुसार जल पीना चाहिए। जल में नीबू का रस मिलाकर पीना अच्छा होता है। चिकित्सा आरम्भ करते समय इन्द्रिय-जुलाब दिया जाता है, जिससे पेट की गर्मी पेशाब द्वारा निकल जाती है और पेशाब की नली साफ हो जाती है। उस समय जल खूब पिया जाता है, इस तरह जल पीने से हानि नहीं होती। किन्तु बिना चिकित्सक की सलाह के ऐसा न करना चाहिए।

गुरु सौवीरकं मद्यं तैलं क्षीरं गुडं घृतं।
अम्ल भूयिष्टेक्षु रसानूप मांसानि वर्जयेत।

प्रमेह रोगी को भारी पदार्थ, सौवीर, कांजी, शराब, तेल, दूध, गुड़, अत्यन्त खट्टे पदार्थ, ईख का रस, पीसा अन्न जैसे गेहूँ का आटा, उरद की पीठी आदि और अनूप देश के जानवरों का मांस त्याग देना चाहिए। यहां जो गुड़ शब्द आया है उससे सब तरह की मिठाई गुड़ चीनी और कार्बोज समझना चाहिए। किन्तु डाक्टर लोग थोड़ी हलकी शराब देना बुरा नहीं मानते। डाक्टर सेसिल वेब जानसन ने लिखा है—

जो लोग थोड़ा शराब पीते हैं वे अच्छी शराब थोड़ी मात्रा में ले सकते हैं, जैसे जिन, ह्विस्की, ब्राण्डी आदि या अन्य हल्की शराब। परन्तु एल, शैम्पेन, स्टाउट, पोर्टर आदि उनके लिए विषवत हानि कारक होते हैं।

आयुर्वेदिक ढंग से बना हुआ मध्वासव प्रमेह मात्र की अचूक औषधि है। उसमें भी थोड़ी (Alcohol) अलकोहल अवश्य रहती है। हमारा विचार तो यह है कि शराबी का प्रमेह जब तक वह शराब त्याग न दे आराम ही नहीं हो सकता।

डाक्टरों की राय में अंडे खाना इस रोग में लाभदायक है। इस विषय में हम अपनी निजी राय कुछ न लिखकर डाक्टर सेसिल वेब जानसन (Dr. Cecil Webb Johnson) की राय उद्धृत करना अनुपयुक्त नहीं समझते। उन्होंने लिखा है—

प्रमेह के रोगी को अण्डा किसी रूप में दिया जाय लाभदायक है। यहाँ तक कि अनेक तरह के आमलेट (अण्डा मिला हुआ एक प्रकार का खाद्य) भी उसे दिये जा सकते हैं। यह बतलाना रुचि-कर होगा कि प्रमेह के लिए अण्डे से चिकित्सा करने के विषय में एक बार बहुत विवाद चला था।

डाक्टर लोग प्रमेह में मक्खन और पनीर देना बुरा नहीं समझते, बल्कि खाने की इजाजत देते हैं। सरसों और मिरचे से खूब परहेज करना चाहिए।

ऊपर लिखा गया है कि ऐसी तरकारी जिसमें कार्बोज (Carbohydrate) और चीनी के तत्व पाये जाते हैं प्रमेही को न खाना चाहिए। किन्तु कभी आवश्यकता पड़ने पर ऐसी तरकारियां कई बार उबाल कर कार्बोज-रहित करके दी जा सकती हैं। किन्तु इतनी अधिक उबाली हुई तरकारी में कोई स्वाद नहीं रहता, वह फीकी हो जाती है।

प्रमेह के रोगी को दिन में इस प्रकार भोजन दिया जा सकता है—पुराने चावलों का भात, मसूर, मूँग या चने की दाल काग़ज़ी नीबू, सहिजन, परवल, बैगन, केले का फूल, गूलर आदि की तरकारी। जो लोग मांसाहारी हैं और बिना मांस खाये जिनको चैन न मिले वे खरगोश, बटेर या हिरन का मांस खा सकते हैं।

रात को रोटी, परवल आदि की तरकारी और कुछ दालें खाई जा सकती हैं। अनार, किशमिश, बादाम, छुहारे आदि थोड़ी मात्रा में लिये जा सकते हैं।

चरक ने कहा है—रात्रि काल में जौ को त्रिफले के क्वाथ में भिगो देवे, दूसरे दिन इनका भात बनाकर शहद के साथ खावे, अथवा इनका जूस बनाकर ठंडा होने पर शहद मिला कर पीवे तो तर्पण हो इन्हीं जवों को सीधु के साथ पान करें तो प्रमेह नष्ट होता है।

कफ-प्रमेह-नाशक काढ़े में जवों की भावना देकर उनके सत्तू, अपूप (पुआ) या गुड़धनिया बनाकर खाना हितकर है गधा, घोड़ा, बैल वा गौ के गोबर में बिना टूटे निकले हुए जौ की—या इनकी लीद या गोबर में भावना देकर गेहूँ जौ आदि की अनेक चीज़ें बनाकर सेवन करे। कुछ लोगों का इस तरह का भोजन अरुचिकर हो सकता है परन्तु लाभदायक भोजन की ओर संकेत करना आयुर्वेद का काम है।

पुराना मध्वासव या लोध्रासव का सेवन करना चाहिए। शहद मीठा होता है फिर भी इसमें कफनाशक गुण है। इस कारण प्रमेह में लाभदायक है। प्रमेह वाले को कसरत से बड़ा लाभ होता है। वाग्भट्ट ने लिखा है—रूखा गाढ़ा उबटन, कसरत, रात में जागना और, दूसरे कफनाशक पदार्थों का खाने के लिए और बाहर लेप या उबटन के लिए प्रयोग करना लाभदायक है।

प्रमेह में शिलाजीत अमृत के समान गुणकारी है। इस कारण इस रोग में शुद्ध शिलाजीत अवश्य सेवन करना चाहिए।

प्रमेह के रोगी को नीचे लिखी चीजें हानिकर होने से छोड़ देनी चाहिए—

अनूप देश (तर जमीन या पानी के पास की जमीन) के जानवरों का मांस, गुड़, दही, खटाई, दूध, मदिरा, तेल, अदरक, मिर्चा, घी, ऊख का रस, राब, हुक्का, बीड़ी, मछली आदि का मांस, स्त्री-प्रसंग, कांजी, लौकी, ताड़ फल की गुठली की मींगी, दिन में सोना, उड़द की दाल या अन्य चीजें, आलू, घुइयां, पूरी कचौरी, नारंगी, अमरूद, केला; कुम्हड़ा, प्याज, पान, खाना, मिठाई, सांभर नमक, स्त्री को प्यार करना, स्त्रियों के साथ एकान्त में बातें करना, धूप में घूमना, क्रोध करना, गाना आदि कामोत्तेजक बातें सुनना, सिरका, रायता आदि खाना, मक्का, नया चावल, नया गेहूँ, शर्करामय पदार्थ हानिकर हैं।

सावां, कोदो, उद्दालक, प्रमेह में पथ्य है। पुरान गेहूँ, चना, अरहर, शालिचावल, कुलथी, मूंग आदि अन्न, तीते परवल आदि शाक, जङ्गली जीवों का मांस, सेंधा नमक, काली मिर्च आदि चीजें लाभदायक हैं।

१६—आहार और मलावरोध

आज कल भारत वर्ष में ९५ प्रतिशत मलावरोध की शिकायत रहती है, इसको दूर करने के लिए तरह-तरह के इलाज किये जाते हैं, डाक्टरों की शीशियाँ खाली की जाती हैं, हकीमों के तरह-तरह के शरबत और गुलकन्द आदि सेवन किये जाते हैं और अनेक प्रकार के जुलाब लिये जाते हैं। किन्तु इसका कोई फल नहीं होता, जुलाब लेने से रोग घटने के बदले और बढ़ जाता है, आंतें दुर्बल हो जाती हैं और हर वक्त मलभेदक औषधियों की आवश्यकता पड़ती रहती है। डाक्टर सेसिल वेब-जानसन ने जुलाब के विषय में लिखा है—

मलभेदक औषधियों का सतत प्रयोग करने से पाचन-शक्ति कमजोर हो जाती है और ऐसी औषधि का सेवन करनेवाला चाहे वह नित्य सेवन करे या साप्ताहिक, भविष्य में दुर्बल स्वास्थ्य की नींव दृढ़ करता है।

वस्तुत: यह ऐसी व्याधि है कि औषधि-सेवन से इसमें लाभ नहीं होता। यदि आहार ठीक रखा जाय और कुछ प्राकृतिक नियमों का पालन किया जाय तो यह निर्मूल हो सकती है। यह स्मरण रखना चाहिए कि यह ऐसी व्याधि नहीं है जिसकी चिकित्सा निश्चिन्तता पूर्वक की जाय। इससे ग्लानि, क्लान्ति, शक्तिक्षीणता, अशान्ति, शिरशूल, निरुत्साह आदि पैदा होते हैं। दीर्घकालीन मलावरोध से क्षुद्रान्त्र में कफ विकार और वृहदान्त्र में दाह तथा और व्याधियां उत्पन्न होती हैं। इसका प्रभाव इससे सम्बन्ध रखनेवाले अवयवों ही पर नहीं पड़ता वरन् साधारण स्वास्थ्य पर भी इसका घातक प्रभाव पड़ता है। छोटी आँत कब्ज

के कारण भरी और वायुपूरित रहती है। इस कारण उसका दूषित प्रभाव नसों और रक्त की थैलियों पर पड़ता है। यह कथन बिलकुल सत्य है कि 'कब्ज प्रायः सभी शारीरिक व्याधियों का मूल है।'

मलावरोध की व्याधि महिलाओं को विशेषतः होती है। इससे उनका वह शारीरिक सौन्दर्य, जिसकी वे प्रतिनिधि समझी जाती हैं, नष्ट हो जाता है। मलावरोध के कारण चमड़े का रंग पीला पड़ जाता है, और आँखों की आभा नष्ट हो जाती है। शरीर पर फुन्सियाँ और चकत्ते निकल आते हैं, जिससे शारीरिक सौन्दर्य लुप्त हो जाता है, और स्वच्छ और सुन्दर मुखाकृति सुस्त, उदास और कान्तिहीन हो जाती है। प्रश्वास और स्वेद में एक प्रकार की गन्ध आने लगती है जिससे सुन्दरता काफूर हो जाती है। लालित्य और सौन्दर्य चाहनेवाली महिला का यह कर्तव्य होना चाहिए कि वह अपने शरीर के बाह्य और आन्तरिक दोनों भागों को स्वच्छ रखे। केवल बाह्य स्वच्छता से काम न चल सकेगा। आँतों के अन्दर मल भरा हो, उसका विषाक्त प्रभाव सारे शरीर पर पड़ रहा हो, और उसकी स्वच्छता का ध्यान न रखा जाय तथा सुगन्धित साबुन और तेल के बहुत प्रयोग तथा अनेक प्रकार के सुगन्धमय स्नान से शरीर का ऊपरी भाग स्वच्छ रखा जाय तो उसका क्या फल होगा? क्या आन्तरिक रोग बाह्य सौन्दर्य को नष्ट न कर देगा?

यह पहले कहा जा चुका है कि इस व्याधि में जुलाब काम नहीं करता और हानिकारक भी होता है, अतः इस व्याधि को प्राकृतिक ढङ्ग से जीतने की चेष्टा करनी चाहिए, विशेषतः आहार द्वारा। बहुत से लोगों को यह अहितकर व्याधि भोजन के कारण ही पकड़ लेती है। यह अहितकर आहार या तो अशुद्ध मिश्रण द्वारा होता है या उपयोगी फलों के अव्यवहार द्वारा।

कब्ज वाले व्यक्तियों को चावल, साबूदाना, आरारोट और मैदा न सेवन करना चाहिए। ये चीजें अतीसार में दी जाती हैं, अतः ये स्वभावतः हानिकारक होती हैं। मांस और पनीर भी कब्ज करनेवाले पदार्थ हैं। फलों में अनन्नास कब्ज करने वाला है।

✓ ऐसी तरकारियाँ या शाक जिनमें रेशे होते हैं जैसे भिंडी या बथुवा का शाक, पालक का शाक और मूली आदि साफ पाखाना लाने में बहुत सहायक होती हैं। पात गोभी, फूल गोभी और अंकुर निकले हुए अन्न कब्ज वाले रोगी स्वतंत्रता-पूर्वक सेवन कर सकते हैं। प्याज इसके लिये खास चीज है। साधारण कब्ज अकसर इसके प्रयोग से नष्ट हो जाता है।

हाथ की चक्की का पिसा जव या गेहूँ का आटा अच्छा होता है। गेहूँ का आटा बिना छना ही खाना अच्छा होता है। यदि गेहूँ या जव पीसते समय उसमें चौथाई खड़े चने मिला दिये जावें तो इसकी रोटी कब्ज न करेगी। मैदा अच्छी चीज नहीं है। इसके खाने से निरोग मनुष्य रोगी हो जाता है, अतएव जिनको कब्ज हो उनको तो और भी हानिकर है। यह पहले बतलाया जा चुका है, अतः जिनको मलावरोध हो उन्हें इसको न खाना चाहिए। जव, चना या गेहूँ की रोटी खाने वाले को घी का इस्तेमाल करना चाहिए। क्योंकि चना रूक्ष है, दूसरे घी और तेल यों भी आँतों को चिकनी रखने में सहायता देते हैं और कब्ज नहीं होने देते।

प्रातःकाल शहद, अमरूद का मुरब्बा या पक्के अमरूद खाना लाभदायक है। सभी तरह के ताजे और सूखे फल अच्छे होते हैं, जिनमें अमरूद अधिक अच्छा है, क्योंकि वह बीजों के कारण शुद्ध शौच लाने में विशेष सहायक होता है। मुनक्के और अंगूर अच्छे फल हैं। बादाम से भी कब्ज दूर होता है किन्तु यह पचता

देर में है और मन्दाग्नि वाले मनुष्य इसे पचा नहीं सकते। अकसर देखा गया है कि जिनकी पाचन-शक्ति कमज़ोर है या जो किसी तरह का व्यायाम नहीं करते, उन्हें बादाम के सेवन से आम के दस्त (मरोड़ी) आने लगती हैं, अतः इसका प्रयोग ताकतवर आदमियों को ही करना चाहिए। अन्य प्रकार के भी फल चाहे वे कच्चे खाये जायँ या उबाल कर या भून कर, कब्ज को दूर करते हैं। सिंघाड़ा ठंडा होने के कारण कब्ज करता है। किसी-किसी को बैंगन भी कब्ज कर देता है। पाखाना साफ लाने के लिए अंजीर और सूखे आलूबुखारा अच्छे होते हैं। ४-५ दाना अंजीर लेकर थोड़े से पानी में मिट्टी के बर्त्तन में उबाल कर या काढ़ा बना कर पीना बाड़ा लाभदायक होता है। इसी प्रकार बीस-पचीस मुनक्के लेकर साफ कर ले और बीजों को निकाल दूध में उबाल ले, रात को सोते समय इस मुनक्के को खाकर दूध पी लेने से दस्त साफ आता है। किन्तु जिनका कोठा अत्यन्त कड़ा होता है उन्हें इससे लाभ नहीं होता। यदि वे अधिक मात्रा में इसका सेवन करें तो कुछ लाभ हो सकता है। हमारी राय में ऐसे लोगों को ताजे फल खूब खाना चाहिए। जिन चीजों में पोटैशियम साल्ट होता है उनसे दस्त साफ होता है टमाटर पालक आदि में यह खूब होता है। विशेष जानकारी के लिए देखिये हमारी पुस्तक 'हमारा भोजन'।

कब्ज को बढ़ानेवाले कारणों में कम पानी पीना एक खास कारण है। जिस प्रकार पानी से हमारे घर के बर्तन साफ किये जाते हैं, उसी प्रकार आँतों को धोने के लिये अधिक पानी की जरूरत पड़ती है। प्रत्येक मनुष्य को लगभग दो तीन सेर से कम पानी न पीना चाहिए। प्रातःकाल या रात को सोते समय थोड़ा सा गरम जल पीना अच्छा होता है। इससे आँतों को बल मिलता है। दोपहर के समय एक गिलास ताजा जल पीने की

आदत डालनी चाहिए। कुछ दिनों तक आदत नहीं पड़ती, किन्तु कुछ ही दिनों में आदत पड़ जाने पर उस समय प्यास लग ही जाती है।

सुबह उठकर मुँह साफ करके एक गिलास बासी जल पीने से बड़ा लाभ होता है। इसकी साधना करने से बहुत से रोगों से छुटकारा मिल जाता है। हमारा अनेक वर्ष का अनुभव है कि इससे पेट साफ करने में बड़ी सहायता मिलती है। प्रत्येक मनुष्य को प्रातःकाल उठ कर सब काम छोड़ कर पहले पाखाने जाने की आदत डालनी चाहिए। कुछ ही दिनों के अभ्यास से सोकर उठते ही पाखाना जाने की जरूरत पड़ती है। जिस मनुष्य में यह आदत नहीं है या जो यह आदत नहीं डाल सकता, वह दुनिया में दूसरे कोई काम कर सकेगा, इसमें शक है। प्रातःकाल उठकर जो जल पिया जाता है, उसे 'अमृतपान' या 'उषः पान' कहते हैं। इससे आंतों में बल आता है, और बड़ी आंतों को मल निकालने में सहायता मिलती है। कुछ लोगों को आरम्भ में उषः पान से जुकाम हो जाया करता है, किन्तु इससे डरना न चाहिए! जुकाम होने पर पानी पीना बन्द कर देना चाहिए और अच्छा होने पर फिर आरम्भ करना चाहिए।

गाय का दूध हलका होता है और भैंस का भारी। आयुर्वेद में दूध को दस्तावर माना है और डाक्टर इसे काबिज कहते हैं। दोनों मतों में विरोध का क्या कारण है, ठीक कहा नहीं जा सकता। चरक, सुश्रुत, वाग्भट्ट प्रभृति ऋषियों ने दूध दस्तावर ही माना है। हाँ, ऐसा हो सकता है कि दूध किसी को ठीक तरह न पचने के कारण कब्ज कर जाय, लेकिन न पचने के कारण जो कब्ज होगा वह दूध का सामान्य गुण नहीं कहा जा सकता यदि शुद्ध दूध मिले और शुद्ध ढङ्ग से ही उसका प्रयोग किया जाय तो वह सदा अपना गुण दिखायेगा। हमारी राय में जिनको

दूध पच जाता है, उन्हें अवश्य सेवन करना चाहिए। इससे कब्ज को दूर करने में सहायता मिलेगी। जिन्हें दूध ठीक तरह न पचता हो, वे दूध में पीपर डाल कर पकावें, और मिश्री मिलाकर गरम गरम पीयें, तो धीरे-धीरे आदत पड़ने पर पचने लगेगा थोड़ा सा चूने का साफ निथरा पानी मिला देने से भी दूध जल्द पचता है। चाय और काफी के विषय में यह कथन ठीक है कि इससे कब्ज होता है इससे सदैव बचना चाहिए।

योरप के कुछ चिकित्सक शराब और मांस खाने की राय देते हैं। उनके यहाँ बिना शराब और मांस के लोग रह नहीं सकते। इसी कारण वहाँ के डाक्टरों को बाध्य होकर इन चीजों को खाने के लिए लिखना पड़ता है। हमारी राय में मांस प्रत्येक दशा में कब्जकारी है। इससे बचते रहना अधिक अच्छा है। जिनको कब्ज रहता हो, वे मुनक्के से आयुर्वेदिक रीति से बना हुआ द्राक्षासव या द्राक्षारिष्ट सेवन करें तो १५ दिन में अवश्य लाभ होगा, औषधि प्रामाणिक बनी होनी चाहिए।

कब्ज को दूर करने के लिए जिस प्रकार भोजन में सुधार करने की जरूरत है, उसी प्रकार प्रतिदिन नियमित व्यायाम की भी आवश्यकता है। व्यायाम करने से शरीर का मल जल जाता है, साँस द्वारा प्राणप्रद-वायु के अधिक मिलने से रक्त साफ हो जाता है, यही क्यों व्यायाम से शरीर को पोषण करनेवाले कुछ तत्व भी जल जाते हैं। आँतों को बल मिलता है, हाथ-पाँव हिलाने से उनको परिश्रम पड़ता है और वे अधिक पौष्टिक तत्व चाहते हैं। इस कारण आमाशय, और पाचन-संस्थानों को उन अंगों को उचित पोषण पहुँचाने के लिए अधिक काम करने की आवश्यकता पड़ती है, अतः भूख खूब लगती है और शरीर की सारी प्रणाली ठीक हो जाती है। कब्ज दूर करनेवाली कुछ कसरतें भी हैं। किन्तु टहलना सबसे अधिक लाभदायक है। जो लोग

टहलने का अभ्यास बढ़ाना चाहें, उन्हें छै सात मील से कम प्रति दिन न टहलना चाहिए। गोल्फ, टेनिस, वालीबाल आदि भी अच्छी कसरतें हैं। पेडू को कुछ देर तक खुली हथेली से दाहिने से बांये और धीरे धीरे रगड़ने से भी खूब लाभ होता है।

ऊपर जितने उपाय बताये गये हैं वे तभी फलप्रद हो सकते हैं जब भोजन ठीक हो। बिना भोजन के ठीक हुए कोई उपाय लाभदायक न होगा। संक्षेप में भोजन इस प्रकार का होना चाहिए।

(१) ताजे फल खूब खाये जायँ। (२) जव, चना या गेहूँ की रोटी खाई जाय, जहाँ तक हो चावल का उपयोग न किया जाय! (३) मांसाहारी मछली खा सकते हैं। (४) घी-तेल का व्यवहार किया जाय। (५) रेशेदार तरकारी और साग भोजन में अवश्य रहें। गोभी, करमकल्ला, प्याज, भिण्डी, मूली की तरकारी, अदरक, सोंठ, पोदीना, धनिया आदि की चटनी आदि थोड़ी बहुत खाई जाय। (६) पानी खूब पिया जाय। (७) शहद, गुड़ और अमरूद का मुरब्बा या पका अमरूद थोड़ा बहुत रोज खाया जाय। (८) जल में नीबू का रस डालकर पीना विशेष लाभप्रद होगा। (९) हलवा खाने वाले सूजी का हलवा खा सकते हैं। (१०) यदि जुलाब लेने की जरूरत पड़े तो रेंड़ी का तेल ही लिया जाय। (११) थोड़ा व्यायाम अवश्य किया जाय।

१७—आहार और ज्वर

ज्वर कई तरह का होता है। परन्तु ज्वर शब्द से यही अर्थ समझा जाता है कि रक्त गरम हो गया है और उसके कारण सारा शरीर गरम हो गया है। रक्त के गरम हो जाने के कारणों के सम्बन्ध में अलग अलग चिकित्सा-पद्धतियों के विभिन्न विचार हैं। एलोपैथिक डाक्टरों की राय यह है कि हमारे शरीर में रोग के कीटाणु जब प्रवेश कर जाते हैं तब वे एक तरह का जहर पैदा करते हैं और वही जहर रक्त में मिल कर रक्त को गरम करके ज्वर पैदा कर देता है। दूसरे लोग यह मानते हैं कि भोजन और गलत रहन सहन के कारण जो विष शरीर में इकट्ठा हो जाता है उसी के कारण ज्वर हो जाता है। आयुर्वेद के मत से गलत रहन सहन और गलत भोजन के कारण जो जहर इकट्ठा होता है वह दोषों को—वात, पित्त और कफ को—दूषित कर देता है। ये बिगड़े हुए दोष जठराग्नि को उसके स्थान से निकालकर रक्त में मिला देते हैं। जठराग्नि पित्त मय है, अग्नि मय है। इस जठराग्नि के अपने स्थान से हट जाने के कारण ही ज्वर के रोगी को भूख नहीं लगती।

जठराग्नि के स्थान से हट जाने की अवस्था में रोगी को मन्दाग्नि हो जाती है इसीलिए उसे भूख नहीं लगती, ऐसी अवस्था में जो लोग नये ज्वर में दूध या फल अथवा खाना खिलाया करते हैं वे कितनी गलती करते हैं! इसी गलती के कारण अक्सर ज्वर बिगड़ जाता है, तपेदिक और दूसरे भयानक ज्वरों में बदल जाता है। अक्सर इन्हीं कारणों से लोग मर भी जाते हैं।

ज्वर की साधारण पहचान यह है कि शरीर गरम हो जाता है, सन्ताप होता है, अक्सर पसीना नहीं निकलता, भूख बन्द हो जाती है, सारा शरीर जकड़ जाता है, दर्द होता है, बेचैनी रहती है।

ज्वर का साधारण लक्षण तो यही है। परन्तु किसी ज्वर में जलन अधिक होती है, प्यास बहुत लगती है, किसी में सरदी खाँसी होती है, किसी में सारे शरीर में पीड़ा अधिक होती है, किसी में शरीर का रक्त बदल जाता है। यह सब ज्वर के ही भेद है। पाठकों को इनके विस्तार में जाने की आवश्यकता नहीं क्योंकि यह चिकित्सकों के जानने के विषय हैं।

एक प्रकार का ज्वर जाड़ा दे कर आनेवाला होता है। इस ज्वर का कोई समय निश्चित नहीं होता। कभी रोज आता है कभी एक दिन का अन्तर देकर आता है, कभी दो दिन का अंतर देकर आता है। कभी दिन को आता है कभी रात को। इसे डाक्टर लोग मलेरिया कहते हैं। हम वैद्य लोग इसे विषम ज्वर कहते हैं। यह बड़ा हठी ज्वर है और संक्रामक रोग की तरह फैलता है। इसकी उत्पत्ति डाक्टर लोग मच्छरों से मानते हैं। जहाँ मच्छर बहुत होते हैं, जहाँ की जमीन तर होती है वहाँ यह अकसर फैलता है।

कुछ ज्वर नये होते हैं और बड़े तेज होते हैं उनको एक्यूट या तरुण ज्वर कहते हैं। कुछ पुराने ज्वर होते हैं और धीमें होते हैं और कई महीनों तक चलते रहते हैं इनको जीर्ण ज्वर कहते हैं। इन्हीं को एलोपैथ डाक्टर क्रानिक फीवर या स्लो फीवर कहते हैं।

एक प्रकार का ज्वर और होता है उसे टाइफाइड कहते हैं। यह बड़ा हठी ज्वर समझा जाता है। यह कई सप्ताह तक चलता रहता है, डाक्टरों को परेशान कर देता है। यह बहुत धीरे धीरे

घटता है इसी कारण इसको मंथर ज्वर भी कहते हैं। मंथर शब्द का अर्थ होता है सुस्त चलनेवाला। इलाज के लिए हमारी राय में यह ज्वर सब से सीधा होता है परन्तु अपनी असावधानी के कारण डाक्टर इसे भयानक बना देते हैं। गलत भोजन देकर ज्वर बिगाड़ देते हैं और अकसर इसी गलती के कारण अतिसार और निमोनिया तथा प्रलाप (Delirium) आदि उपद्रव इस रोग में उत्पन्न हो जाते हैं। रोगी अकसर इन चिकित्सकों की लापरवाही और मूर्खता के कारण मर जाते हैं। ऐसे अयोग्य चिकित्सक दूसरों की जान से मजाक करते हैं और अपना अनुभव बढ़ाते हैं।

इस साल (१९४५) में प्रयाग में टाइफाइड का बड़ा जोर था। बहुत से लोग इस रोग से मरे हैं। जहाँ तक हमारी जानकारी है डाक्टरों के इलाज में रहने वाले रोगी ही अधिक संख्या में मरे हैं। इसका प्रधान कारण यही है कि डाक्टर अपने रोगियों को दूध खूब पिलाते हैं जब दूध के कारण पेट में गुड़गुड़ाहट, अतिसार आदि रोग होते हैं रोगी का पेट फूलने लगता है तब वे कह देते हैं यह उपद्रव (Complication) हो गया है। वे अपनी मूर्खता नहीं स्वीकार करते कि हमारे दूध पिलाने के कारण ऐसा हो गया है। कैसा अन्धेर है।

जब सभी दोष एक साथ बिगड़ कर ज्वर पैदा करते हैं तब सन्निपात ज्वर होता है। यह भी अकसर भोजन की गलती के कारण ही बिगड़ कर हो जाता है। यह ज्वर अकसर मारक हो जाता है; चिकित्सक को परेशान करनेवाला है। इसमें रोगी अकबक बकता है, सिर हिलाता है। टाइफाइड ज्वर और निमोनिया में अकसर ये उपद्रव होते हैं। ये ज्वर सन्निपात के कारण ही उत्पन्न भी होते हैं। यदि ज्वर होते ही भोजन की उचित व्यवस्था की जाय, ज्वर दूर करनेवाले परहेज किये जायँ तो

ज्वर कभी बिगड़ेगा ही नहीं और न तो रोगी को परेशानी होगी न चिकित्सक को। भोजन की गलतियों के कारण ही अकसर परेशानियाँ बढ़ जाती हैं।

ऊपर बहुत संक्षेप में ज्वर के भेदों के ऊपर विचार किया गया है। अब इन ज्वरों को दूर करने के लिए उचित भोजन, खान पान और रहन सहन कैसी होनी चाहिए इस पर विचार करना शेष रह जाता है।

इलाज के सिलसिले में यदि विचार किया जाय तो रोग दो ही तरह के होते हैं। एक तरुण (Acute) और दूसरे जीर्ण (Chronic)। ज्वर दोनों तरह का होता है। तरुण रोगों में रोग का वेग अधिक रहता है, दोष अधिक बिगड़े हुए रहते हैं पेट की हालत बिगड़ी हुई रहती है। इस अवस्था में यही उचित होता है कि पेट को आराम दिया जाय और भोजन न पहुँचाया जाय। इस प्रकार सभी तरुण रोगों का जोर घट जाता है। यही विधि ज्वर के लिए भी उपयोगी है। इसीलिए चतुर वैद्य सदैव ज्वर के रोगी को उपवास कराते हैं। ज्वर की हालत में रोगी को कोई भी चीज खिलाना यहाँ तक कि दूध भी पीने को देना जहर देने के समान हानिकर है। ज्वर के रोगी को थोड़ा-थोड़ा गरम जल दिया जाना चाहिए। यदि प्यास न भी लगी हो तब भी थोड़ा-थोड़ा गरम जल देते रहने से ज्वर का वेग बढ़ने नहीं पाता। पानी में थोड़ा सा नीबू का रस मिलाकर पिया जा सकता है। उपवास के दूसरे दिन सुबह एनिमा ठण्डे पानी से ले लेना चाहिए। यदि दूसरे दिन तबीयत ज्यादा अच्छी हो ज्वर कम हो गया हो तो सन्तरे का रस या मोसम्बी का रस पाव डेढ़ पाव तक पिया जा सकता है। जहाँ ये फल न मिले वहाँ मुनक्का उबाल कर मलकर छान लेना चाहिए और वही पानी पीना चाहिए। रोगी को पूर्ण विश्राम करना चाहिए। साधारण ज्वर प्रायः तीन दिन में ही

पूर्ण मानसिक और शारीरिक विश्राम तथा ऊपर बताये पथ्य द्वारा दूर हो जाता है। दो तीन दिन तक रोज एनिमा लेकर पेट साफ कर लेना चाहिए। जब ज्वर उतर जाय तब धीरे-धीरे अन्न खाना शुरू करना चाहिए।

ऊपर बताई विधि से साधारण ज्वर प्रायः दो तीन दिनों में चला जाता है। डैंगू फीवर, काला अजार, हड्डी तोड़ बुखार आदि की तरुणावस्था में भी यही पथ्य रखने की जरूरत है। यदि इन रोगों में कुछ औषधि देने की भी आवश्यकता प्रतीत हो तो किसी चतुर चिकित्सक से परामर्श लेकर कुछ औषधि दी जा सकती है। परन्तु ध्यान इस बात का अवश्य रखना चाहिए कि जहरीली औषधियों अथवा रोग को दबा देनेवाली औषधियों का उपयोग न किया जाय।

जाड़ा देकर आनेवाले मलेरिया ज्वर में भी यह सब उपाय करने चाहिए। उपवास, फलों का रस और एनिमा का प्रयोग अत्यन्त आवश्यक है। जब तक ज्वर चढ़ा हो कुछ भी खाने को न दिया जाय। इस ज्वर में जब ज्वर उतर जाता है तब रोगी यह समझता है कि ज्वर अब चला गया और खाना खा लेता है। खा लेने के बाद और तेज ज्वर आ जाता है। प्रायः रोज रोगी इसी प्रकार खाया करता है और रोज ही ज्वर भी आया करता है।

इस ज्वर में यदि अन्न बन्द कर दिया जाय और ऊपर बताया पथ्य रखा जाय तो ज्वर का वेग यों ही कम हो जाता है यदि भूख लगे तो गाय का माठा दिया जाय। माठा देने में डरने की बात नहीं है। प्राचीन काल से भारतीय चिकित्सक इसका प्रयोग करते आये हैं। हमने स्वयं मठे का खूब प्रयोग किया है अब तो एलोपैथ डाक्टर भी मठे का प्रयोग मलेरिया में करने लगे हैं। हम अपने रोगियों को आवश्यकतानुसार पाव भर से लेकर तीन सेर

मठा पिलाया करते हैं। मठा उन्हीं को नुकसान करता है जो मठा भी पीते हैं और अन्न भी खाते हैं तथा जो एनिमा लेकर या अन्य तरीके से अपना पेट साफ नहीं रखते। मठा देने से प्रायः ज्वर रुक जाता है, मलेरिया के कीटाणु मर जाते हैं। यदि थोड़ी कसर रह जाय तो एक रत्ती फुलाई हुई फिटकिरी गुड़ में मिलाकर ज्वर आने के तीन घंटे पहले से हर घन्टे एक एक खुराक दे देनी चाहिए। इससे ज्वर प्राय: दो दिनों में ही रुक जाता है। यदि ज्वर उतरने में विलम्ब हो तो किसी चिकित्सक को दिखला देना अच्छा होता है। क्योंकि कोई भी पुस्तक चिकित्सक का स्थान ले सके यह सम्भव नहीं है।

सरदी जुकाम वाले ज्वर में भी उपवास बहुत लाभ करता है। सरदी वाले ज्वर में कई दिनों तक उपवास की जरूरत रहती है क्योंकि कफ देर में कम होता है, दूर होता है। जो लोग जुकाम की हालत में खाते हैं उनका जुकाम बिगड़ जाता है। खाँसी पुरानी पड़ जाती है, दमा घर दबाता है निमोनिया हो जाता है। इसलिए जुकाम की हालत में अन्न खाना नादानी करना है।

टाइफ़ाइड

ज्वर आने पर ज्वर की दवा करने पर भी यदि एक सप्ताह तक ज्वर न उतरे तो टाइफाइड का सन्देह होता है। इस ज्वर की पहचान यह है कि सुबह कुछ हलका रहता है, परन्तु ४—५ बजे से ज्वर तेज होता है। सबेरे शाम के ज्वर में लगभग तीन डिग्री का अन्तर रहता है। जीभ बीच में सफेद रहती है परन्तु किनारे-किनारे चारों ओर लाल रहती है पेट में नीचे की ओर दाहिनी जाँघ के पास अकसर दर्द होता है। किसी को कब्ज रहता है किसी को दस्त आने लगते हैं।

इस ज्वर में कोई चीज खाने की राय डाक्टर नहीं देते क्योंकि आँतों में घाव हो जाते हैं। इसमें न तो कोई फल दिया जाता है और न तो किसी प्रकार का अन्न ही दिया जाता है। परन्तु डाक्टर लोग दूध पिलाना इस रोग में बुरा नहीं समझते। रोगी में ताकत बनाये रखने के लिए दूध देना ये लोग आवश्यक समझते हैं। बार्ली का पानी भी देते हैं। परन्तु हमारी राय में आँतों में घाव रहनेके कारण कुछ भी भोजन देना हानिकारी होता है। दूध पूर्ण भोजन है। दूध देने से पेट में अफरा हो जाता है, पेट फूल जाता है, पेटमें गुड़ गुड़ाहट पैदा हो जाती है, और रोगी को दस्त आने लग जाते हैं। टाइफाइड में दस्त होना खराब लक्षण है। ज्वर भी इसी आहार के कारण देर में उतरता है कभी कभी तो छ-छ-सात-सात सप्ताह तक ज्वर नहीं उतरता। रोगी के प्राण संकट में पड़ जाते हैं।

ज्वर शुरू होते ही यदि उपवास कराया जाय और केवल गरम जल ही पीने को दिया जाय और कोई चीज न दी जाय और प्रति दिन कम से कम एक बार एनिमा दे दिया जाय तो टाइफाइड ज्वर में कोई उपद्रव नहीं होता। ज्वर भी जल्द उतरता है। इस क्रम से न तो पेट में गुड़गुड़ाहट होती है, न पेट फूलता है, न दस्त आते हैं और ज्वर भी नहीं बिगड़ता सुगमता पूर्वक निर्विघ्न उतर जाता है। कुछ लोग इस प्रकार के भोजन के सम्बन्ध में यह शिकायत कर सकते हैं कि रोगी निराहार रहने पर कमजोर हो जायगा। परन्तु यह व्यर्थ की दलील है। दूध देते रहने पर भी रोगी कमजोर हो जाता है और मर भी जाता है, महीनों तक खाट पर पड़ा कष्ट भोगता है। १४-१९ दिनों के उपवास में ही रोगी निर्विघ्न आराम हो जाता है, उसके प्राण बच जाते हैं। हमने ७-८ बरस के बच्चों को केवल गरम जल पर १४-१५ दिन का उपवास करा कर उनका टाइफाइड

ज्वर आराम किया है। रोग की हालत में शरीर को भोजन की आवश्यकता रहती ही नहीं। भोजन न मिलने पर पाचन क्रिया को विश्राम मिलता है और हमारी भीतरी शक्ति रोग को निमूल करने में लग जाती है। जब रोग का जोर कम होता है भीतरसे तबीयत अच्छी होने लगती है तब धीरे-धीरे भूख लगनी शुरू होती है। यदि गलती से उसी समय कुछ भारी चीज खाने को दे दी जाय तो रोग का जोर फिर बढ़ जाता है, रोग बिगड़ जाता है और भूख भी मर जाती है। ऐसी गलती अकसर टाइफाइड ज्वर में भोजन देने में होती है। रोगी ने जैसे ही कहा कि भूख लगी है वैसे ही उसे दूध देकर उसकी बीमारी खराब कर दी जाती है। यदि रोगी को कुछ देने की जरूरत पड़े भी तो मुनक्के का काढ़ा उस अवस्था में दिया जाय जब रोगी को दस्त न आते हों। इससे ताकत भी बनी रहती है, और ज्वर भी उतरने में मदद मिलती है। आवश्यकता पड़ने पर किसी चतुर चिकित्सक से परमर्श लेना अच्छा है। कमजोर रोगी और छोटे बच्चों को कोई चीज ऐसी देने की आवश्यकता पड़ती है जिसमें उनकी ताकत न घटे। ऐसी अवस्था में ग्लूकोज दिया जाता है। दूध फाड़ कर उसका जल दिया जाता है सन्तरे या परवल का रस दिया जाता है।

सन्निपात ज्वर

यह खतरनाक और भयानक ढंग का ज्वर है, अच्छे से अच्छे चिकित्सक इस रोग के इलाज से घबराते हैं क्योंकि इसमें अनेक उपद्रव उठ खड़े होते हैं और रोगी की अवस्था अनिश्चित सी रहती है, रोगी आराम होगा या नहीं यह निश्चय ही नहीं रहता। अयश न हाथ लगे इसी कारण चिकित्सक घबराते हैं। सचमुच वह बहुत ही यशस्वी चिकित्सक होता है जो सन्निपात

के रोगियों को प्राण दान देता है। यदि ज्वर शुरू होते ही उपवास, गरम जल और एनिमा का व्यवहार किया जाय तो ज्वर बिगड़ता ही नहीं, इस रोग में चतुर चिकित्सक से परामर्श लेना आवश्यक है। परन्तु उपवास करने और गरम-जल पीने से सभी दोष शान्त हो जाते हैं इस रोग में प्रायः कुछ औषधि देने की आवश्यकता रहती है। इसके लिए चतुर चिकित्सक का ही सहारा लेना चाहिए।

पुराना ज्वर

बारह दिन के बाद ज्वर पुराना समझा जाता है। कुछ आचार्यों का मत है कि इक्कीस दिन के बाद ज्वर पुराना होता है। गलती से टाइफाइड ज्वर को पुराना ज्वर नहीं समझ लेना चाहिए। और सन्निपात ज्वर को भी पुराना ज्वर समझ लेने की गलती न होनी चाहिए। क्योंकि टाइफाइड ज्वर तो कई सप्ताह चलता ही है सन्निपात ज्वर भी कई सप्ताह चल सकता है। सन्निपात ज्वर और टाइफाइड ज्वर से जीर्ण ज्वर भिन्न होता है यदि साधारण आदमी इसे न समझ सकें तो किसी चतुर चिकित्सक को दिखाकर निश्चय कर लेना चाहिए।

जीर्ण ज्वर अकसर कमजोरी के कारण होता है, धातुओं के क्षीण होने के कारण होता है। इस कारण इससे धातुओं को बढ़ाने का प्रयत्न करना चाहिए, शरीर में बल बढ़ाने का प्रयत्न करना चाहिए। इसके लिए आयुर्वेद में औषधियों से सिद्ध किया हुआ घृत पिलाने का विधान है। कई प्रकार के घृतों का वर्णन ग्रन्थों में है। पिपल्यादिघृत छागलादि घृत आदि कई घृत हैं। दूध देने से भी धातुएँ बढ़ती हैं। दूध का कल्प करा देने से शरीर भी पुष्ट हो जाता है और ज्वर भी उतर जाता है। दूध के कल्प

की विधि हमने अपनी पुस्तकें तपेदिक और दूध चिकित्सा में लिखा है, पाठकों को वहीं देखना चाहिए।

शरीर की रुक्षता दूर करने के लिए लाक्षादि तेल या चन्दनादि तैल की मालिश करनी चाहिए। पुराने ज्वर में रोगी को अवगाहन करना चाहिए। अवगाहन जल चिकित्सा की विधि है। एक बड़ा सा लोहे का टब या नाद लेकर उसमें पानी भर लिया जाता है उसी में रोगी को लिटाया जाता है। पानी में लेटने का समय ३ मिनट से शुरू करके १—२ मिनट रोज बढ़ाकर आध घन्टे या पौन घन्टे तक किया जा सकता है। चिकित्सक की राय से पानी ठंडा या गरम किसी प्रकार का लिया जा सकता है। ज्वर नाशक औषधियों से काढ़ा बनाकर उस काढ़े में भी रोगी को अवगाहन कराया जा सकता है। लुई कुने का हिप बाथ भी इसी अवगाहन का एक भेद है। अवगाहन क्रिया आयुर्वेदीय चीज है, जो लोग जल चिकित्सा पच्छिम की देन समझते हैं, वे गलती करते हैं। यह शुद्ध आयुर्वेदीय विधि है।

इस रोग में भी फल और तरकारियों का इस्तेमाल करना चाहिए। पुराने ज्वर को दूर करने के लिए एनिमा एक सिद्ध चिकित्सा है। जब ज्वर छूट जाय रोगी काफी तगड़ा हो जाय तब उसे अन्न दिया जाय तो अच्छा है। परन्तु जो लोग अन्न ही खाना चाहें उनको पुराना शालि चावल, साठी चावल मूँग की दाल, पुराने गेहूँ की रोटी, पुराने जव की रोटी जो उचित हो दिया जा सकता है। मांसाहारी लोग खरगोश या बकरे के मांस का शोरबा ले सकते हैं। रोगी को कोई एक ही प्रकार का भोजन मिलना चाहिए। ऐसा न हो कि उसे दूध, मांस, रोटी, चावल दाल आदि सब एक साथ ही रोज खिलाया जाय। जिसे रोटी देना हो उसे रोटी और परवल की तरकारी दी जा सकती है, उसी प्रकार लौकी, नेनुआ, मूली, पालक, सलजम, प्याज आदि

की तरकारियां ज्वर में पथ्य है। किशमिश, मुनक्का, अंजीर, छुहारे, आम, सन्तरे, सेब, फालसा, आदि फल ज्वर नाशक हैं। इन सब में से जिसका मौसिम हो, जिसको रोगी बिना अधिक आर्थिक कष्ट के खा सके तथा पचा सकें उसे खिलाना चाहिए।

तपेदिक भी एक प्रकार का पुराना ज्वर ही है। ज्वर पुराना होने पर तपेदिक का भी सन्देह हो जाता है। इसलिए पुराने ज्वर के इलाज में बड़ी सावधानी रखनी चाहिए और खान पानकी उचित व्यवस्था रखनी चाहिए।
